सिद्धयोग

2016

संस्थापक : योगयोगेश्वर
अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

योग सिद्धान्त एवं आध्यात्म का
प्रतिपादक मासिक

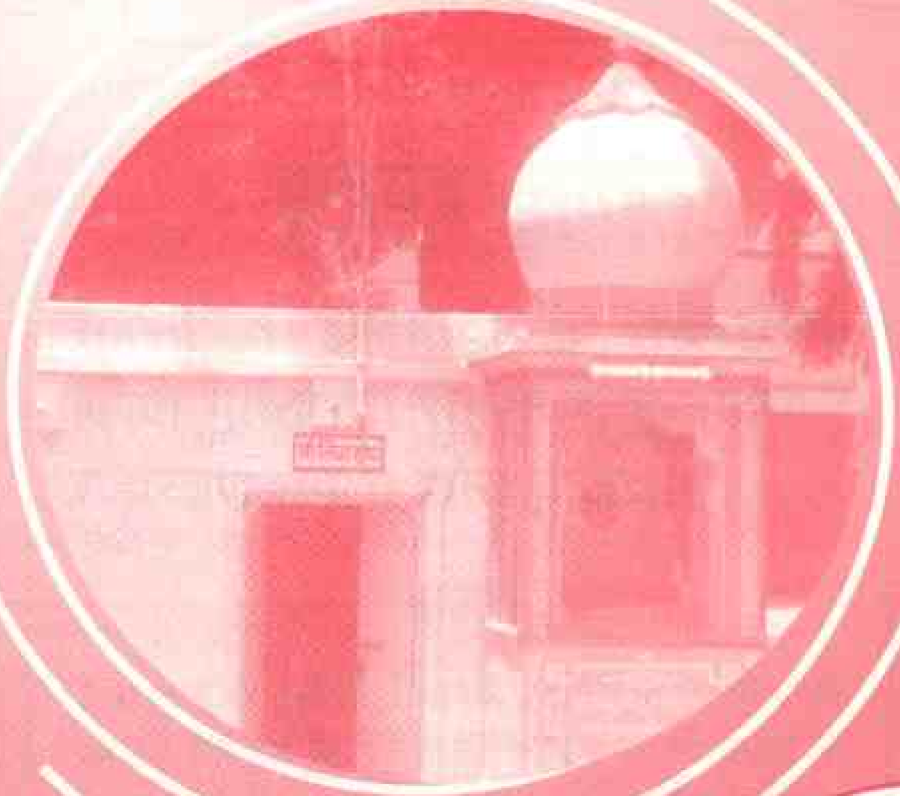

एक प्रति : रू. 20
द्विवार्षिक : रू. 320

वर्ष : 49; अंक : 2
मई 2016

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन सवाँई-283202 (आगरा) उ.प्र

अमृत कण

अहम् सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्व प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधाः भावसमन्विता।।

(गीता 10/8)

मैं (भगवान) ही सबका उत्पत्ति-स्थान हूँ और समस्त जगत् की मुझ (भगवान) से ही प्रवृत्ति होती है, यह मानकर बुद्धिमान् भावसम्पन्न पुरुष अपने (सब कर्मों द्वारा सर्वत्र सदा) मेरा ही भजन सेवन करते हैं।

❊ ❊ ❊

रुचं नोधेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसू नस्कृधि।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम्।।

(यजुर्वेद)

जैसे परमात्मा पक्षपात् न करके सभी वर्ग के प्राणियों से समान रूप से प्रीति करता है, वैसे ही हम सब मिलकर, ब्रह्मवेत्ता विद्वान, राजकीय व्यक्ति, व्यवसायी और सेवायें प्रदान करने वाले सभी नागरिक परस्पर रुचि और प्रीति पूर्ण व्यवहार करें।

❊ ❊ ❊

तदात्वे चानुबन्धे वा यस्य स्यादशुभं फलम्।
कर्मणस्तन्न कर्तव्यमेतद् बुद्धिमतां मतम्।।

(चरक संहिता)

कार्य करते समय, तत्काल या भविष्य में, जिसका फल अशुभ अर्थात् हानिकारक हो, इसका विचार करके, ऐसे काम कदापि नहीं करना चाहिये। यह बुद्धिमानी का सिद्धान्त है।

❊ ❊ ❊

अवशेन्द्रिय चित्तानां हस्तिस्नानमिव क्रिया।
दुर्भगाभरण प्रायो ज्ञानं भारः क्रिया बिना।।

(हितोपदेश)

जिनके वश में चित्त और इन्द्रिय नहीं है उनकी क्रिया (कर्म) हाथी के स्नान के समान व्यर्थ है। बिना आचरण किये ज्ञान बोझ के समान है जैसे कुरूप स्त्री के पास आभूषण।

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक–पत्र

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवांई (एत्मादपुर) आगरा

वर्ष 49
अंक 2

मई
2016

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरत्तो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्यर्थान् बहुतर विषदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

इन्द्रदेव स्तुति

सहस्त्रं त इन्द्रोतयो न सहस्त्रमिषों
हरिवो गूर्ततमाः। सहस्त्रं रायो मादयध्यै
सहस्त्रिण उप न सन्तु वाजाः।।

भावार्थ

हे अश्व युक्त इन्द्रदेव ! आपके हजारों रक्षा साधन हमारे संरक्षण निमित्त हैं। हे इन्द्रदेव ! आप हजारों प्रकार के प्रशंसनीय अन्न, आनन्दित करने वाले धन तथा असीमित वल हमें प्रदान करें।

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग–योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक : आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी
संयुक्त सम्पादक : डॉ. विजय सिंह
प्रबन्ध सम्पादक : समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई–बहिन

इस अंक में ...

1.	विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज	3
2.	सम्पादकीय	5
3.	अरे कान्हा तू आ गया – श्री जगदीश राए बंसल	7
4.	" योग में पर्यावरण का महत्व "– डॉ. जे. पी. शर्मा	10
5.	गीत – भूपेन्द्र 'अंकुश'	14
6.	योग कर्म का डंका बजाये – राजीव कुमार	15
7.	श्री सत्गुरुदेव जी की कृपा – श्याम मनोहर श्रीवास्तव	16
8.	योग–आसन	20
9.	श्रीमद्भागवत में योग–परिचर्चा – डॉ. विजय सिंह	21
10.	महाप्रभु श्री रामलाल जी का जन्मोत्सव	26
11.	सद्गुरु सत्ता – कृष्ण कुमार पाण्डेय	29
12.	गुरुदीक्षा के बाद मेरे अनुभव – महावीर सिंह चौहान	32
13.	अष्टाङ्ग योग साधना (वहिरंग) – प्रो. ऋषिराम शर्मा	36

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 170.00
द्विवार्षिक	: रु. 320.00
आजीवन	: रु.1000.00

विशेष लेख

योगियों का अनुष्ठान और क्लेश निवृत्ति

योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

साधना में अनुष्ठान का अपना महत्व होता है। बिना साधना के कोई भी साधक लक्ष्य तक पहुँचने में समर्थ नहीं हो सकता है। योग दर्शन में वर्णित पाँच विधि क्लेशों की निवृत्ति भी योगांङ्गों के अनुष्ठान से हो सकती है। इसे योग दर्शन में बहु विधि समझाने का उपक्रम किया गया है।

योगाङ्गों के अनुष्ठान करने का फल विवेक ख्याति बतलाया है। विवेक ज्ञान उसी दशा में प्राप्त हो सकता है जबकि रज और तम के नाश हो जाने के बाद स्वतः ही सत्व शुद्धि हो जाय और ज्ञान चमक उठे।

अर्थात् योगाङ्गों का अनुष्ठान करने से अशुद्धि का नाश होता है, तब तक जब तक मनुष्य को पूर्ण ज्ञान प्राप्त न हो जाये। जैसा कि इस सूत्र पर व्यास भाव्य है जिसका कि अर्थ है--

योग के जो आठ अंग हैं उनको अभ्यास में लाने से पंच पर्वा विद्या जनित अशुद्धि का नाश होता है और अविद्या के नाश हो जाने पर सम्यक् ज्ञान की अभिव्यक्ति होती है। जैसे – जैसे मनुष्य साधनों का अनुष्ठान करता है वैसे ही वैसे अशुद्धि क्षीण होती चली जाती है, त्यों–त्यों क्षय कर्मानुरोधिनी ज्ञान दीप्ति बढ़ती चली जाती है। जितना–जितना अशुद्धि का नाश होता है उतना ही उतना विवेक ज्ञान बढ़ता रहता है। इस विवेक ज्ञान की वृद्धि गुणों से लेकर जब तक आत्म–दर्शन नहीं होता तब तक होती रहती है तथा विवेक ख्याति बढ़ती ही चली जाती है। पुरष–ज्ञान ही विवेक ज्ञान की सीमा है।

हमने अपने पिछले लेखों में क्लेश–निवृत्यक यम–नियमादि का वर्णन भली प्रकार कर दिया है। यम–नियमों का पालन करना विवेक ज्ञान का साधन है। यम–नियमों के बाद क्रमानुसार भगवान पातंजलिदेव ने आसनों का संकेत किया है। आसनों के विषय में लोगों की धारणा है कि ये सब केवल शरीर शुद्धि के ही कारण भूत हैं, किन्तु बात ऐसी कहीं है।

शारीरिक अयोग्यता प्राप्त करना तो आसनों का फल है ही किन्तु शरीर के साथ – साथ साधक के मानस स्वास्थ्य को भी इससे बहुत लाभ पहुँचता है। आसन करने वाले साधक का शरीर स्वस्थ, सुकोमल एवं लम्बे समय तक रहने वाला बन ही जाता है किन्तु उसके साथ–साथ ज्यों–ज्यों मनुष्य आसन, बन्ध मुद्राओं का अधिक अभ्यास करता है त्यों–त्यों उसके शरीर में वीर्य व्यापक होकर मनुष्य शान्ति एवम् आत्मतेज को बढ़ाने वाला होता है। आसनों में भी कुछ आसन इस प्रकार के हैं कि जिनका प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य वृद्धि के साथ–साथ आत्मोत्कर्ष की ओर भी बहुत प्रगति के साथ बढ़ाना होता है। जैसे – सिद्धासन,

पद्मासन पश्चिमोत्रान एवं शीर्षासन। जहाँ हमारे आचार्यों ने आसनों का वर्णन किया है वहाँ उनके फलादेश में पारमार्थिक लाभ का भी बहुत बड़ा परिचय दिया है। देखिये सिद्धासन का फल, योगी आत्माराम ने " हठयोग प्रदीपिका " में लिखा है जिसका अर्थ है –

चौरासी आसनों में सिद्धासन के अभ्यास को ही प्रमुखत: करना चाहिये जो बहत्तर हजार नाड़ियों के मल का शोधन करता है। इस आसन का बराबर सेवन करते रहने से 12 वर्ष में मनुष्य सिद्धि को पा जाता है। इसी प्रकार से पद्मासन का फल देखिये –

पद्ममासन पर बैठकर जो योगी मारुत धारण करता है उसकी मुक्ति में कोई शंका ही नहीं।

इसी प्रकार पश्चिमात्तान का फल देखिये–पश्चिमोत्तान आसन प्राण वायु को पश्चिम वाही करता है अर्थात् सुषुम्ना में पहुँचाता है और जठराग्नि को बढ़ाता है। उदर के मध्य में कृशता को करता है और बल देकर शरीर को आरोग्य करता है।

ऐसे ही शीर्षासन का फल देखिये –

शीर्षासन को विरीत करणी मुद्रा कहा गया है। शीर्षासन के अभ्यास में मनुष्य को अध–शिरार्धवाद होना पड़ता है इसलिये इस आसन को विपरीतकरणी मुद्रा कहा गया है। जो मनुष्य और मृत्यु दर विजय पा जाता है तथा पूर्णरूपेण सिद्ध हो जाता है।

अत: हमारे योग आसन केवल शारीरिक स्वास्थ्य के दाता ही नहीं प्रत्युत आत्मोत्कर्षण के भी दाता हैं। समस्त योगाङ्गों में आसनों का स्थान उत्कृष्ट होने से ये भी अनुष्ठान करने वाले मनुष्य को विवेक -ख्याति की ओर ले जाते हैं।

जहाँ पर योग के अन्यान्य अंगों का अभ्यास करने में अविद्या जनित अशुद्धि का नाश होता है, वहाँ पर प्राणायाम का विषय उत्तरोत्कृष्ट है। भगवान पतंजलि देव अपने योगदर्शन में तप के द्वारा अशुद्धि का नाश होने पर कायिक और ऐन्द्रीय शुद्धि होने का उत्कृष्टता के साथ वर्णन करते हैं। तप की उनकी व्याख्या निम्न है –

गर्मी–सर्दी, भूख–प्यास के जोड़े को सहन करना तप कहलाता है। द्वन्द सहन का अर्थ इतना ही नहीं कि मनुष्य समय–समय पर भूख–प्यास पर कन्ट्रोल करले प्रत्युत प्राण पर नियंत्रण करने को सबसे बड़ा तप कहा है। प्राण की महिमा का वर्णन करते हुये हमारे आचार्यों ने बहुत कुछ कहा है। वे लिखते हैं – प्राण ही भगवान शिव हैं और प्राण ही स्वयं ब्रहम हैं। प्राणी ही सारे संसार को धारण करता है। सारा संसार प्राणमय है। इसलिये प्राण पर नियन्त्रण करना तपों से भी महान तप है एवम् विवेकख्याति का मूल कारण है। अत: अविद्या जनित क्लेशों की निवृत्ति के लिये प्राणायाम भी एक अमूल्य साधन है। भगवान मनुदेव अपनी मनुस्मृति में लिखते हैं –

जिस प्रकार सोना चाँदी आदि धातुओं के तपने से उनके मल जल जाया करते हैं, उसी प्रकार प्राणों पर नियन्त्रण करने से इन्द्रियों के मल जल जाते हैं।

अत: प्राणायाम भी क्लेश निवृत्ति का एक बहुत बड़ा साधन है जिसका सांकेतिक परिचय देने का हमने पूर्ण प्रयत्न किया है। आगामी लेखों में हम इसका विशद् वर्णन करेंगे।

दान, तप, यज्ञ एवं स्वाध्याय का फल योग

आचार्य (डा.) दासलाल शर्मा

सामान्यतया मनुष्य का मन चंचल होता है। उसमें एकाग्रता न के बराबर होती है। मन की एकाग्रता के प्राप्त करने के लिये ही स्वाध्याय आदि साधनों का अनुष्ठान किया जाता है। अखिलात्मा भगवान् श्री कृष्णचन्द्र जी महाराज ने श्री मद्भागवत् पुराण तथा श्री मदभगवद्गीता में स्थल–स्थल पर इस बात की पुष्टि की है कि मन की एकाग्रता प्राप्त करने के लिये पुण्य का अर्जन आवश्यक है। श्री मद्भागवत पुराण के एकादश स्कन्ध में भगवान् श्री कृष्ण सखा उद्धव को उपदेश करते हुये एक श्लोक में बताते हैं –

दानं स्वधर्मो नियमो यमश्च
श्रुतं च कर्माणि च सद्व्रतानि
सर्वे मनोनिग्रहलक्षणान्ताः
परो हि योगो मनसः समाधिः

अर्थात्– दान, स्वधर्म का पालन, योग के अंगरूप यम–नियम का पालन, वेद विहित कर्म, नाना प्रकार के पुण्य कर्म एक ही फल देते है वह है मन का ध्येय में समाहित हो जाना, पूर्णतया एकाग्र हो जाना जैसे परम योग कहा जाता है। इसी बात की पुष्टि भगवान आगे के श्लोक में करते हैं –

समाहितं यस्य मनः प्रशान्तं
दानादिभिः किं वद तस्य कृत्यम्
असंयतं यस्य मनो विनश्यद्
दानाभिश्चेदपरं किमेभिः।

अर्थात् – जिसका मन शान्त और समाहित है उसे दानादि समस्त सत्कर्मो का फल मिल चुका है अब उसे कुछ लेना बाकी नहीं है। और जिसका मन चंचल है अथवा आलस्य व प्रमाद से अभिभूत हो रहा है उसको इन दानादि सत्कर्मों से कोई लाभ नहीं हुआ है। भगवान् आगे के श्लोकों में भी एकाग्र चित्त वाले साधक की महत्ता को बतलाते हुए कहते हैं –

मनोवशेऽन्ये ह्यभवन स्म देवा
मनश्च नान्यस्य वशं समेति
भीष्मो हि देवः सहसः सहीयान्
युञ्ज्याद् वशे तं स हि देव देवः।

सभी इन्द्रियाँ मन के वश में हैं। मन किसी इन्द्रिय के वश में नहीं है। यह मन बलवान से भी बलवान अत्यन्त भयंकर देव है। जो इसको अपने वश में कर लेता है वही देव देव इन्द्रियों का विजेता है। मन को मनुष्य का बड़ा शत्रु माना गया है। इसका आक्रमण असह्य है। पढ़िये इन्हीं भावों

को भगवान के शब्दों में –

तं दुर्जयं शत्रुमसह्य वेग

मरुन्तुदं तन्न विजित्य केचित्

कुर्वन्त्यसद्विग्रहमत्र मर्त्यै

मित्राण्युदासी नरिपून विमूढ़ाः।

सचमुच मन बड़ा शत्रु है। इसका आक्रमण असह्य है। यह बाहरी शरीर को ही नहीं, हृदयादि मर्म स्थानों को भी वेधता है इसे जीतना बहुत ही कठिन है। अतः मनुष्य को चाहिये कि सर्वप्रथम इसी शत्रु पर विजय प्राप्त कर ले। परन्तु होता यह है कि मूढ़ लोग इसे जीतने का प्रयास नहीं करते परन्तु मनुष्यों से व्यर्थ ही झगड़ा–बखेड़ा करते रहते हैं और संसार के लोगों को ही अपना शत्रु, मित्र व उदासीन बना लेते हैं। मनुष्य की बुद्धि अंधी हो रही है तभी तो वह शरीर को ही आत्मा समझ बैठता है। देखें निम्न श्लोक को –

देहं मनोमात्रमिमं गृहीत्वा

ममाहमित्यन्धधियो मनुष्याः

एषोऽहमन्योऽयमिति भ्रमेण

दुरन्त पारे तमसि भ्रमन्ति।

अज्ञानी मनुष्यों की बुद्धि अन्धी हो रही है तभी तो वे इस मनः कल्पित शरीर को 'मैं' और 'मेरा' मान बैठते हैं और फिर इस भ्रम के फन्दे में फँस जाते हैं कि ये मैं हूँ और यह दूसरा। इसका परिणाम यह होता है कि मूढ़ इस अनन्त अज्ञानान्धकार में ही भटकते रहते हैं।

इस प्रकार से भगवान् ने भागवत में ध्यान की श्रेष्ठता को ही दर्शाया है। श्री मद्भगवद्गीता में भी आठवें अध्याय के अन्तिम श्लोक में भगवान् ने वेदाध्ययन यज्ञ, तपादि के पुण्य को अल्प बताकर ध्यान की ही महत्ता को दर्शाया है।

देखें निम्न श्लोक –

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव

दानेषु यत्पुण्य फलं प्रदिष्टम्

अत्येति तत्सर्व विदित्वा,

योगी परम स्थानमपैति चाद्यम्।

वेदाध्ययन, यज्ञ, पद और दान से मिलने वाला फल उच्च लोकों की प्राप्ति कराता है, उत्तम भोगों को प्रदान कराता है जबकि ध्यान योगी परमात्मा के परम आदि स्थान तक पहुँच जाता है।

अरे कान्हा तूं आ गया

श्री जगदीश राए बंसल "अधम"

परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम।
धर्म संस्थायनार्थाय, सम्भवामि युगे युगे।।

(गीता)

" अरे कान्हा तूं आ गया " ये मखमली स्वर हैं सर्व समर्थ योगी राज श्री देवरहा बाबा जी के, जो अवनी मण्डल पर अवतरित अपने गुरुदेव भगवान श्री चन्द्र मोहन जी महाराज के प्रति कहते सुने गए हैं। इन शब्दों को याद करने का संयोग कुछ ऐसे बना कि योगी राज श्री दास लाल जी महाराज द्वारा पन्द्रह अक्टूबर 2015 से 22 अक्टूबर 2015 तक अपने संवाई धाम आश्रम में श्री मद्भागवत ज्ञान योग कथा का शुभ आयोजन किया गया था। इस भागवत सप्ताह के अनवरत श्रोता एवं आश्रम के प्रति गहन निष्ठा और गुरुदेव जी की मार्मिक जानकारी रखने वाले श्री भवानी शंकर शर्मा – संवाई से एक कि.मी. दूरी पर लगते गाँव मंगल पुर निवासी ने बताया कि यह बात सन् 1973–74 के श्री प्रयाग राज माघ मेला की है। यहाँ गंगा मैय्या–यमुना मैय्या और सरस्वती मैय्या के पवित्र संगम स्थल में डुबकी लगा कर श्रद्धालु स्वयं का जीवन सार्थक एवं धन्य मानते हैं। अतः इसी तपो भूमि संगम तट पर अखण्ड मण्डलाकार योग योगेश्वर गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज का योग प्रशिक्षण केन्द्र संवाई धाम का शिविर पूरे माघ मेला के लिए रामानुज मार्ग पर बड़े उल्लास के साथ कार्यरत था।

एक प्रातः अपने दैनिक कार्यक्रम यथा प्रभात संगम स्नान – अखिल ब्रह्माण्ड नायक जगत नियन्ता महा प्रभू श्री राम लाल जी महाराज की दिव्य आरती पूजा–गीता पाठ–गुरु मन्त्रजाप–ध्यान–धारणा तथा अल्पाहार के पश्चात श्री गुरुदेव जी महाराज ने श्री मुख से आदेश दिया कि आज हम सभी योगी राज श्री देवराहा बाबा के दर्शनार्थ जा रहे हैं। तुम में से जिस किसी को बाबा जी के दर्शन की अभिलाषा हो, उनके आश्रम में पहुँच जाएँ।

श्री देवरहा बाबा के विषय में याद करते चलें कि एक बार बाबा जी नर्वदा नदी के तट पर बारह वर्षो से साधना रत रह कर खेंचरी मुद्रा की सिद्धी हेतू साधना कर रहे थे। उस समय त्रिकाल दर्शी दादा गुरु देव श्री राम लाल जी महाराज आकाश मार्ग द्वारा नैपाल धाम के लिए गमन कर रहे थे। अकारण दयालु प्रभू जी भूतल पर उतरे और बाबा श्री की खेंचरी मुद्रा सिद्ध करा कर देवरहा बाबा को सिद्ध योगी राज जी महाराज बना दिया। समय की गति से बाबा जी अपने आश्रम में लकड़ी एवं बाँस–बल्ली से बने मचान पर विराजमान रहने लगे। पश्चात दिगम्बर रहने लगे थे।

अब अपनी बात पर लौटते हैं। बाबा जी के शिविर में आज ही के दिन कोई महान हस्ती बाबा जी के दर्शनार्थ आने वाली थी। खुसर–फूसर तो यह हो रही थी कि तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्द्रा गाँधी पधारने वाली हैं। अतः प्रशासन एवं सेवा दार पूर्णतया सतर्क थे। जब अपने गुरुदेव भगवान श्री चन्द्रमोहन जी महाराज बाबा श्री के शिविर में पहुँचे तो अति विशिष्ट मार्ग से हो

कर कार सीधी मचान के पास आकर रुक गई। उपस्थित गुरु भाईयों एवं दर्शनार्थियों द्वारा महाप्रभू श्री राम लाल जी महाराज की जय–शेरों के सरदार श्री चन्द्रमोहन की जय एवं देवराहा बाबा की जोशीली जय घोष सुन कर योगी राज श्री देवरहा बाबा मचान कुटि के बाहर बनी दीर्घा में आ गए। यहाँ पर एक मत के अनुसार बाबा जी अपनी समाधी से उठ कर दीर्घा में आ गए, वहीं दूसरे मत के अनुसार बाबा श्री अन्तर्धान थे और विश्व नियन्ता त्रयलोक पावन श्री चन्द्र मोहन जी महाराज के पधारने पर प्रकट हो गए। लेकिन यथार्थ तो गर्भ गृह में ही निहित है। अपने अखण्ड मण्डलाकार जी गाड़ी से उतरे और दोनों सिद्धों ने एक दूसरे को देखा तो देखते ही देवराहा बाबा जी महाराज कह उठे, **" अरे कान्हा तूं आ गया "** अपने आराध्य देवजी ने इसका उत्तर अपनी चिरपरिचित मधुर मुस्कान के साथ दिया।

आपकी मुस्कां ने हमारे होठ बन्द कर दिए।
अभी होठ खुलते कि फिर मुस्का दिए।।

अतः दोनों महात्मना एक दूसरे को अपलक नेत्रों से निहारते रहे। पश्चात परस्पर वार्तालाप हुआ और बाबा श्री ने अपने कान्हा अर्थात सिद्धयोगाधिपति गुरुदेव का भव्य स्वागत किया। फिर बाबा जी ने कहा कि मैं आपको योगी सम्राट–त्रिकाल दर्शी–योग–योगेश्वर–कलिकाल अवतारी ....आदि किस सम्बोधन से पुकारूँ ? आप तो आप ही हैं। आपको कौन जान सकता है ? चूंकि भावना का संसार पृथ्वी से भी विशाल होता है तो भक्तशिरोमणी तुलसीदास जी महाराज कहते हैं कि –

सोई जानत–जेही देत जनाई

और दूसरी एक कहावत और है कि हीरे का मूल्य जौहरी ही जान सकता है अर्थात एक सिद्धेश्वर ही दूसरे सिद्धेश्वर को जान सकता है कि इस धोती कुर्ते में छिपे स्वयं अखिलात्मा कन्हैया ही हैं।

यह दिव्य दृष्टि मात्र देवरहा बाबा में ही नहीं अपितु काल चक्र, युग चक्र और जग चक्र चलाने वाले गुरुदेव भगवान श्री चन्द्र मोहन जी महाराज की अनेक महिमा है। यथा –

बात सन् 1981 की है। बिहार प्रान्त के चम्पारण जिला में आदरणीय गुरुभाई श्री सुरेश चन्द शर्मा मैनेजिंग डायरेक्टर ऑफ ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन को अखण्ड मण्डलाकार गुरुदेव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज ने सात दिवसीय योग प्रचार कार्यक्रम आयोजन की अनुमति दी थी। वहाँ एक सिद्ध फकीर रहते थे। उस फकीर के सैंकड़ों शिष्य उनकी मान मर्यादा पर फिदा रहते थे। वहाँ गुरुदेव के आगमन पर उन शिष्यों के मन में अकारण ही ईर्ष्या पनप उठी। परिणामतः उन शिष्यों के उक्त फकीर मौली को गुरुदेव भगवान के विरूद्ध भड़का कर शास्त्रार्थ द्वारा पछाड़ने का सड़यंत्र रच डाला। अतः वह सिद्ध फकीर वाहि–वाहि लूटने के मनसूबे से बड़े ताम–झाम से सैंकड़ों शिष्यों सहित पंडाल में आ धमके। कुछ देर श्री मुख से अमृत वचन सुनने समझने के पश्चात फकीर बाबा जी ने जो आंकलन किया कि –

नजरें जब बदली कि नजारे बदल गए।
किस्ती ने यों मोड़ा रुख कि किनारे बदल गए।।

परिणामतः फकीर महोदय ने अपने शिष्यों को फटकारते हुए– ओजस्वी वाणी से कहा कि अरे हरामजादो यह सेठ सा दिखने वाला धोती कुर्ते में खुदा से रंच मात्र भी कम नहीं है। इनको प्रणाम करो और अपनी मूर्खता की क्षमा याचना करो। ये साक्षात खुदा हैं। दर्शन कर लो जी भर कर। और प्रार्थना की कि :–

आप फरिश्ता नहीं परवर दीगार हैं।
हमारे मुकदर में आई ईक बहार हैं।।
खुद नसीब की तसवीर है आप।
उमीदों से बड़ी तकदीर हैं आप ।।

इस बात पर एक और बात याद आई कि राजस्थान राज्य के अन्तर्गत गंगा पुर सिटी में सन् 1983–84 के जून मास में आदरणीय गुरुभाई श्री मनोहर तिवारी को गुरुदेव के शिविर की अनुमति मिली थी। प्रारम्भिक के दो दिनों तक तो प्रवचनों के समय श्रोताओं की संख्या नग्न सी ही रही। मगर तीसरे दिन वहाँ के एक मान्य वर सिद्धयोगी श्री राम लड्डू बाबा अपने सैंकड़ों शिष्यों सहित पंडाल में आसन जमा कर बैठ गए। मगर बाबा श्री सबसे पीछे यों ही भूमि पर बैठ गए। उनके एक परम भक्त ने आसन लगाते हुए बाबा जी से अर्ज की कि आप आसन ग्रहण करें। बाबा श्री बोले कि बच्चा मुझे अपनी पूरी जिन्दगी में पहली बार खुले नेत्रों से स्थूल रूप में श्री कृष्ण भगवान के दर्शन हो रहे हैं। मैं एक क्षण भी वंचित नहीं गवाना चाहता। मुझ से कुछ भी बा‌त मत करो। तुम भी साष्टांग प्रणाम करो और जन्म–जन्म के चक्कर से छुटकारा पा लो। इनके एक–एक अमृत कण गीता में भगवान श्री कृष्ण के मुख से निकले शब्द हैं।

चिंगारी अंगार से कम नहीं।
सादगी श्रृंगार से कम नहीं।।
ध्यान कर देखो मेरे बच्चा।
ये दर्शन भगवान से कम नहीं।।

परिणामतः–

गुरु चन्द्रमोहन कोई और नहीं ये सिद्ध गुरू हमारे हैं
जिन्ह चोरी–चोरी माखन खाया वो ही नन्द दुलारे हैं
यमुना किनारे गऊ चराई, ये काले कम्बल वाले हैं
मधु बन में जो तान सुनाई– वोही बन्शी वाले हैं
अर्जुन को गीता ज्ञान दिया था – हैं वो ही कृष्ण मुरारी
गुरु जी तुम्हें बार–बार वली हारी......।।

!! जय गुरू देव !!

" योग में पर्यावरण का महत्व "

डॉ. जे.पी. शर्मा, पाँटा साहिब, जि. सिरमौर (हिमाचल प्रदेश)

जबसे सष्टि की रचना हुई है, उसी समय से हमारे पूर्वजों ने पर्यावरण साफ सुथरा बनाये रखने के बारे में अधिक महत्व दिया है। मनुष्य का आदि काल से ही पर्यावरण से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। पर्यावरण के साथ यह सम्बन्ध उसके जीवन–मूल्यों पर आधारित रहता आया है। वह जानते थे अगर पर्यावरण को साफ स्वच्छ नहीं रखा तो जीवन खतरे में पड़ जाएगा। इसलिये मानव का प्रकृति के प्रति प्रेम सष्टि काल से चल रहा है। इन्हीं भावनाओं की अभिव्यक्ति हमारे विदुषी पूर्वजों ने वेद–पुराणों में कर रखी है।

वेदों में पर्यावरण के बारे में जो भी लिखा गया है, उसके अनुसार ज्ञात होता है कि हमारे पूर्वज सम्पूर्ण प्रकृति को मानव जाति के हित में देवता तुल्य मानकर पूजा करते थे। प्रकृति के सन्तुलन को बनाये रखने के उद्देश्य से उन्होंने जन सामान्य की भावनाओं को धार्मिक रूप देने का प्रयत्न किया है। वस्तुतः पर्यावरण को धर्म से जोड़ने के पीछे कितने ही अज्ञात सूक्ष्म रहस्य तथा सूक्ष्म तत्व छिपे हुये हैं। जिनका वैज्ञानिक महत्व यजुर्वेद के मंत्रों से स्पष्ट हो जाता है। यजुर्वेद में जहाँ – तहाँ पर्यावरण की रखा के बारे में भाव दृष्टिगोचर होते हैं।

हमारे ऋषि – मुनियों ने पर्यावरण शुद्धिकरण की शाँति के लिये मंत्रों द्वारा परम–पिता परमात्मा से नि 'दन किया गया है। जहाँ कहीं शान्ति पाठ, पूजा अर्चना, अथवा कोई धार्मिक कृत्य किया जाता है, तब निम्न भाव से प्रार्थना की जाती है –

" ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिःसर्व शान्तिः शान्तिरेव शान्ति' सा मा शान्तिरेधि ।। "

(यजु., 36/17)

अर्थात हमारे लिये आकाश, अन्तरिक्ष, पृथिवी, जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, विश्वदेव तथा ब्रह्मा सभी शान्ति देने वाले हों। चारों तरफ शान्ति ही शान्ति हो।

उपर्युक्त शान्ति पाठ में पर्यावरण के सन्तुलन हेतु पूर्वजों द्वारा प्रार्थना की गयी है, जिससे स्पष्ट होता है कि हमारे ऋषि–मुनियों के कैसे सुन्दर विचार थे, पर्यावरण शुद्ध शान्त बनाये रखने के लिये? वे कितने सजग प्रहरी पर्यावरण की रक्षा के रहे होंगे। उन्होंने प्रकृति को बड़ी गहराइयों से देखा समझा होगा, ऐसे भाव आज के समय में नहीं दिखाई दे रहे हैं। जीवन के प्रति संकट बन रहे प्रदूषण से सजग बने रहने की प्रेरणा हमारे पूर्वजों ने दी है।

हमारे पूर्वज सभी में मैत्री भाव तथा समस्त विश्व को ही परिवार समझने की भावना देते रहे हैं। यथा:–

मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।

अर्थात सब जीव मेरा ओर मित्रता की द्रष्टि से देखें। मैं सब की ओर मित्रता की द्रष्टि से देखूं। सब एक दूसरे की ओर मित्रता की द्रष्टि से देखें।

" वसुधैव कुटुम्बकम् " अर्थात सम्पूर्ण पृथ्वी जगत के प्राणी हमारा परिवार है। क्या सुन्दर आदर्श रहा है, हमारे हिन्दु समाज का ? ऐसा उदाहरण अन्य समाजों में नहीं मिलता। हिन्दु समाज की विचार धारा सर्वतोभावेन रही है। इसी के साथ यजुर्वेद में प्रार्थना की गयी है –

" शं नी वात: पवता "।

(36/10)

अर्थात– ऋषियों ने वायुदेव से प्रार्थना की है कि हे पवन देव! वायु हमारे लिये शुद्ध प्रदूषण रहित होकर बहे।

यजुर्वेद में अन्तरिक्ष (वायुमंडल) के पवित्र रहने को भी प्रार्थना की गई है। मृदा संरक्षण के लिये प्रार्थना की गई है –

" पृथिवीं यक्छ पृथिवीं दृह पृथिवीं मा हि सी ।। "

(13/18)

अर्थात्– मृदा को उर्वर बनायें तथा उसके प्रति हिंसा (प्रदूषण) न करे।

एक मंत्र में बादलों से विनती की गई है कि वे हमारे लिये सुखकारी हों।

" शं योरभि सावन्तु न: "।

(36/12)

यजुर्वेद में पेड़–पौधों से प्रार्थना की गई है कि वे हमें सदैव हितकारी हों तथा फलदायी बने रहें। इसी प्रकार पशुओं की रक्षा के लिये विनती की गयी है। कोई भी पेड़–पौधों तथा पशुओं को हानि न पहुंचाये। वृक्षों की रक्षा के संदर्भ में कहा गया है –

" स्वधिते मैन हि सी :। " (4/1)

अर्थात्– वृक्षको कुल्हाड़ी से मत काटो।

हमारे पूर्वजों ने तुलसी के पौधे को घर के आंगन में लगाने की शिक्षा दी है। तुलसी को अति पवित्र, रोगनाशक, प्रदूषण नाषक बतलाया है। इसी कारण तुलसी के पत्तों को पंच्चामृत में डाला जाता है। तुलसी का पौधा अपने चारों तरफ वातावरण साफ स्वच्छ रखता है। इसमें प्राण–वायु होती है। तुलसी की लकड़ी से तुलसी माला इसी कारण बनाई जाती है। इसके उपयोग से शरीर को प्राण वायु अधिक मिलती है। मलेरिया को दूर करता है तथा भूत बाधायें दूर होती हैं।

धर्मग्रन्थों में पीपल के वृक्ष को 'ब्रह्म' कहा गया है। पीपल का समूचा जीवन औषधि का काम करता है। इसे 'एन्टीआक्सीडेंट' कहा गया है। इसी प्रकार अनेकों पेड़–पौधों के धार्मिक तथा सामाजिक महत्वों की चर्चा यजुर्वेद में कही गई है।

यजुर्वेद में औषधियों को अपना मित्र कहा गया है इसी लिये उनके संरक्षण की प्रार्थना की गई है। लंका युद्ध के समय संजीवनी बूटी द्वारा लक्ष्मण की प्राण रक्षा के बारे में आप सभी भली – भाँति परिचित हैं। अत: वनस्पतियों से हमारा जीवन संरक्षित होता है। वनस्पतियों के सममिश्रण से

ही च्यवन ऋषि ने " च्यवन प्राश " बनाया था जो श्वास, दमा तथा अनेक रोगों में रामबाण औषधि है। वनस्पतियों के सेवन से मानव निरोग रहता है, इसीलिये इनके संरक्षण की प्रार्थना हमारे पूर्वजों ने की है।

" माध्वीर्न: सन्त्वोषधी: "।

अर्थात् – वनस्पतियाँ मधुमय (रसयुक्त) हों।

" अभयं न: पशुभ्य: "

" द्विपादव चतुष्पात् पाहि "।

यजुर्वेद में मनुष्य को निर्देश दिया गया है कि वे पशुओं को निर्भय होकर रहने दें। उनके साथ हिंसक व्यवहार न करें।

हमारे पूज्य पूर्वजों ने पर्यावरण के सभी घटकों की रक्षार्थ यज्ञ करने की महत्ता पर भी जोर दिया है। प्रकृति के सन्तुलन को बनाये रखने के लिये प्रेरित किया है जिससे प्रकृति पूर्णरूपेण सोम्यावस्था में बनी रह सके।

यज्ञ के बारे में कहा गया है कि यज्ञ करने से प्रकृति का वातावरण साफ शुद्ध बना रहता है। चारों तरफ खुशबू ही खुशबू फैल जाती है जिससे प्रकृति के अँग प्रफुल्लित रहते हैं। यज्ञों के सम्पादन से रोगों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, अत: प्राणी नीरोगता को प्राप्त होते हैं। यज्ञ पृथ्वी की त्वचा की तरह कार्य करते हैं जिससे प्रकृति के अन्त: अंगों की रक्षा होती है। वनस्पति में हरापन बढ़ता है, पर्वत बर्फ से ढक जाया करते हैं। बादल बनते हैं तथा वनस्पतियों की पुष्टि हेतु वर्षा करते हैं। यज्ञों से पर्या 'रण साफ शुद्ध बना रहता है। शुद्ध पर्यावरण योग साधक के लिये अति लाभकारी है। यजुर्वेद में वायु तथा जल की शुद्धि के लिए मंत्र दिये गये हैं। यज्ञों में वेद मंत्रों का ध्वनि के साथ उच्चारण किया जाता है, वह भी यज्ञ का ही स्वरूप है। इससे ध्वनि प्रदूषण नहीं होता है। ध्वनि प्रदूषण के रहते योग साधना नहीं की जा सकती।

इस तरह यजुर्वेद में बहुत से उल्लेख मिलते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि हमारे ऋषि–मुनि कितनी दूरदृष्टि रखते थे। पर्यावरण के वे साक्षात संरक्षक थे। उन्होंने मानव जाति को सिखाया कि बिना प्रयोजन के पेड़–पौधों को काटना पाप होता है। रात के समय वनस्पति तथा पौधों को छूना भी पाप होता है। पर्यावरण बचाने के लिए पेड़ पौधों को धर्म की संज्ञा दी। तुलसी, पीपल, बरगद, कटहल, बेलपत्र तथा ब्रह्मी बूटी इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। वृक्षों से फल की चोरी को हमारे धर्म में पाप कहा गया है। पूर्वजों ने फल की चोरी, बेटे की चोरी करने के समान माना है। कैसे सुन्दर धर्ममयी विचार थे हमारे पूर्वजों के ? याद रखो जब तक पेड़–पौधे हैं, तब तक मानव जाति फल–फूल रही है। पेड़–पौधे वनस्पतियाँ हमारे जीवन के स्तम्भ हैं। पर्यावरण स्वच्छ रहने से प्राणी निरोग बना रहता हैं, वर्षा समय से होती है जिससे प्राणी तो क्या पेड़–पौधे खूब फलते हैं तथा जमीन को उर्वरक बनाते हैं। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण नियंत्रित होता है तथा विभिन्न रोगों का निदान होता है। सुन्दर पर्यावरण में योग साधना भली प्रकार से की जा सकती है।

अत: हम सब मानव जाति का धर्म है कि अपने चारों तरफ के वातावरण को साफ सुथरा बनायें तथा आने वाली पीढ़ियों को भी पर्यावरण संरक्षण के बारे में ज्ञान प्रदान करें जिससे पूर्वजों की अभिलाषा साकार रूप ले सके। यथा –

" सर्वेसन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणी पश्यन्तु मा कश्चिद दु:खभागवेत "

परम पूज्य श्रद्धेय परमाराध्य श्री सद्गुरू देव जी के पावन चरण कमलों में मेरा साष्टाँग कोटि-कोटि नमन् व सभी योग गुरु भाई-बहनों को सादर जय गुरूदेव सहित !

❀❀❀

''वृक्षारोपण''

वृक्षारोपण देश में, बहुत जरूरी काम।
फल, लकड़ी, छाया मिले, खाओ खूब बादाम।।
खाओ खूब बादाम, मनीषियों की सलाह मानो।
शीतल वर्षा होय, आय का साधन जानो।।
कहे ''निशंक'' कविराय मिले जन-जन को पोषण।
देश तरक्की होय, करें यदि वृक्षारोपण।।

शोक संवेदना

❋ बड़े दु:ख की बात है कि श्री सिद्धगुफा योग शिक्षण मन्दिर दिल्ली के आचार्य श्री वेदराम ब्रह्मचारी का 31 मार्च को देहावसान हो गया है। वे गुरुदेव के बहुत पुराने व लाड़ले बच्चे थे और आजीवन आश्रम की सेवा में लगे रहे। उनके न रहने से आश्रम की क्षति हुई है जो पूरी नहीं की जा सकती। श्री प्रभु जी उन्हें अपने चरणों में स्थान दें।

❋ 23 अप्रेल को झाँसी निवासी श्री राधेश्याम शर्मा (गार्ड साहब) का देहावसान हो गया है वे 90 वर्ष के थे और पुराने साधकों में से थे। एक गुरुनिष्ठ सेवक के रूप में उनका जीवन रहा जो साधना रत रहा करते थे और गुरुदेव के नियमों का पालन करने वाले थे। श्री प्रभु जी उन्हें भी अपने चरणों में स्थान दें।

इस दु:ख से दु:खी परिवारिजनों को सिद्धयोग परिवार अपना हार्दिक संवेदना प्रकट करता है।

❋ इन्दौर निवासी त्रिभुवन नाथ मिश्र का 23 मार्च 2016 को देहान्त हो गया है। वे गुरुदेव के पुराने बच्चे थे तथा 92 वर्ष के थे। इनके निधन पर सिद्धयोग परिवार हार्दिक शोक संवेदना प्रकट करता है।

सम्पादक
सिद्धयोग
श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा

गीत

भूपेन्द्र 'अंकुश', जलेसर

एसो भयो विभोर
खुशी में अमृतसर लेतु हिलोर।......

इतनी उठीं तरंग अंग में जाकौ ओर न छोर
रोम-रोम में पोर-पोर में उठती नई निकोर (1)....अमृत

रंगों की बरसातें करती किरनें रंग बटोर
इन्द्रधनुष सी लहर-लहर है बनी हुई चितचोर (2)....अमृत

इधर उधर से खुशबू लेकर हवा चली झकझोर
नाइन बनकर दूर दूर तक खबर करै चहुओर (3)....अमृत

नौऊ दुर्गा करैं नमस्ते झुका शीश, कर-जोर
जोगिन के संग गाइ बधाई लाँगुर नाँचे घोर (4)....अमृत

वीणा पर दें सरगम नारद तार-तार झंकोर
बजा तालियाँ सभी देवता मगन भये सराबोर (5)....अमृत

बादल ढोल बजावें डम-डम, जै-जै बोलें मोर
छः ऋतुओं का भूप जागरण करै बहोर-बहोर (6)....अमृत

●●●

'असत्य पर सत्य की जीत होती है।''

योग-कर्म का डंका बजाये।
जीवन-मर्म, संस्कारों की बगिया चमकायें।।

राजीव कुमार, अम्बिकानगर – अम्ब, जिला ऊना (हि.प्र.)

आओ ! महाप्रभु श्री राम लाल जी की जन्म जयंती मनायें।
योग - गंगा का अविरल-पथ, अपना कल्याण करवायें।।
श्री सिद्ध गुफा संवाई में नेपालवासी की जय-जयकार लगायें।
जन्म-जन्मांतर के पापी-जीवन से मोक्ष-द्वार खुलवायें।।

हम शठ-अधम श्री चंद्रमोहन जी का आशीर्वाद पायें।
श्री प्रभुजी का जीवन-तत्व साधन ही क्लेश भगाये।।
योग की पताका सारे भारत में फहरायें।
जटिल-रोगों का निदान, योग की अलख जगायें।।

इस जीवन को योगारूढ़ करा, काल को बंध लगायें।
बड़ी मुश्किल से योग-दीक्षा पाई है इसको सफल बनायें।।
नित्य-अन्तराय पीछा नहीं छोड़ते, क्लिष्ट-कर्मों से छुड़वायें।
श्री प्रभु जी का एकमात्र सहारा वही स्वयं बेड़ा-पार करवायें।।

हम माया की भूल-भुलैय्या, प्रभुजी हमें अपनायें।
जीवन-समर्पण चरणों में, अष्टांग-योग प्रचारक बन जायें।।
योग-कर्म आने वाली पीढ़ी याद कर, योग का डंका बजायें।
जीवन-मर्म स्वर्णिम-सुखी, कुंदन संस्कारों की बगिया चमकायें।।

उह-लोक किसने देखा ? इह लोक योग रत हो जायें।
चित्त वृति को योगिक यम-नियमों से संयम करवायें।।
श्री अखिलेश्वर प्रभुजी का योग प्रसाद सबको गले लगायें।
एक ही माला के मनके चमके-दमके, योग-विजयी बन जाये।।

संसार भव बन्धन नहीं है और न ही मायाजाल है। वह सृष्टा की अनुपम कलाकृति है जिसमें सत्-चित्त और आनन्द भरा पड़ा है।

श्री सत्गुरुदेव जी की कृपा

श्याम मनोहर श्रीवास्तव, ललितपुर

15 जून सन् 2015 की घटना है। 15 जून 2015 को प्रातः करीब 4 बजे मेरी पेशाब बन्द हो गई बड़ी तकलीफ हो रही थी। मैंने सोचा प्रातः होने पर सरकारी अस्पताल में इमरजेन्सी वार्ड में दिखा लूंगा परन्तु दर्द सहन नहीं हो रहा था और करीब 5 बजे मैंने अपने पुत्र श्री नितिन श्रीवास्तव को बुलाया और अपनी सारी तकलीफ बताई और कहा अस्पताल चलना है। हम लोग मोटर साईकिल से तत्काल सरकारी अस्पताल के इमरजेन्सी वार्ड में पहुंचे। वहाँ डाक्टर ने परीक्षण कर दवाई दी तथा रुकने को कहा। दवा खाने का कोई विशेष आराम नहीं हुआ तो मेरे पुत्र ने सर्जन डॉ. डी.के. राज को फोन किया। डाक्टर राज लड़के के दोस्त होने के कारण तत्काल अस्पताल आ गए तथा मेरा परीक्षण किया। पेशाब बन्द होने कारण उन्होंने पेशाब में नली डलवा दी जिससे पेशाब पूरी निकल गई राहत मिल गई। डाक्टर ने कहा कि अल्ट्रासाउण्ड करा कर लाओ। मैंने तत्काल अल्ट्रासाउण्ड कराया तथा डाक्टर को दिखाया तो डाक्टर ने बताया प्रोस्टेट बढ़ी हुई है तथा झाँसी जाकर आपरेशन करा लो। दिनांक 19.06.2015 को नली डाले ही झाँसी में डाक्टर राजीव सिन्हा को दिखलाया उन्होंने परीक्षण कर पुनः अल्ट्रसाउण्ड एवं खून टेस्ट करा कर दिखाने का आदेश दिया। अल्ट्रासाउण्ड एवं खून टेस्ट कराकर शाम को डाक्टर को दिखाया। डाक्टर ने तत्काल उसी दिन रात्रि में आपरेशन कराने को कहा डाक्टर के अनुसार रात्रि में ही प्रोस्टेट का आपरेशन लेजर से किया गया। आपरेशन में प्रोस्टेट का कटा हुआ भाग जाँच हेतु लाल पैथोलोजी दिल्ली भेजा गया। आपरेशन होने के बाद 5 दिन में छुट्टी हो गई तथा एक सप्ताह में पुनः टांके काटने हेतु बुलाया। प्रभुजी की कृपा से आपरेशन सही हो गया था। सात दिन बाद जब डाक्टर को दिखाया तथा टांके कटवाये एवं दिल्ली से आई रिपोर्ट जो इसी सुधा नरसिंह में आ गई थी लेकर डाक्टर को दिखाया तो डाक्टर ने रिपोर्ट देख कर बताया कि इसमें कैंसर की सम्भावना बताई है और कैंसर की जाँच एवं इलाज हेतु दिल्ली तथा पी.जी.आई. लखनऊ के लिए रैफर कर दिया। झाँसी हम वापिस आये तथा तैयारी करके अपने वाहन कार से पी.जी.आई., लखनऊ चल दिये। साथ में मेरा पुत्र नितिन व मोंठ से मेरे बड़े दामाद गये। प्रभु जी ने मेरे रहने ठहरने की व्यवस्था एक रिश्तेदारी (दामाद के भाई) में करावी। पी.जी.आई. हास्पिटल लखनऊ में परीक्षण के सारे टैस्ट कराये जिसमें करीब 15 दिन का समय लग गया। अन्त में सारे टेस्ट होने तथा उनकी रिपोर्ट आने पर कैंसर का होना स्पष्ट हो गया (प्रोस्टेट कैंसर)। मेरे लड़के नितिन ने ललितपुर सर्जन डॉ. डी.के. राज जो लड़के के मित्र थे बात की तथा प्रोस्टेट कैंसर की रिपोर्ट से अवगत कराया इलाज कराने की सलाह ली। डाक्टर ने सलाह दी कि वहाँ पी.जी.आई., लखनऊ में इलाज न कराके वह मुझे लेकर टाटा मेमोरियल हास्पिटल बम्बई इलाज कराने हेतु चले जाए।

हम लोग उसी शाम लखनऊ से वापस चल दिये तथा दूसरे दिन ललितपुर आ गए। उसी दिन 13.8.15 को पंजाब मेल से बम्बई का रिजर्वेशन था परन्तु रास्ते में गाड़ी गिर जाने के कारण पंजाब मेल कैंसिल हो गई। हमारे छोटे भाई जो रेलवे के डी.आर.एम. ऑफिस में हैं उन्होंने वी.आई.पी. कोटा से झाँसी से बम्बई जाने हेतु कोरला एक्सप्रेस में दो टिकिट रिजर्व करा दिये। वह ट्रेन ललितपुर नहीं रुकती थी इसलिए झाँसी से रात्रि में बैठना पड़ा। उक्त ट्रेन का बम्बई पहुँचने का समय प्रातः 11 बजे था परन्तु वह 11 बजे बजाए बाद दोपहर 3 बजे पहुँची। टाटा हास्पिटल सप्ताह में दो दिन मंगलवार और गुरुवार ओ.पी.डी. होती है तथा प्रातः 8 बजे से 12 बजे तक देखने हेतु नम्बर लगते हैं इसकी हम लोगों को कोई जानकारी नहीं थी जैसे ही बम्बई पहुंचे बम्बई बी.टी.से टैक्सी करके टाटा हास्पिटल आए। मैं सिर्फ बम्बई एक बार जब पढ़ रहा था बम्बई आया था तथा लड़का नितिन एक भी बार नहीं आया था एक प्रकार से दोनों के लिए बम्बई शहर नया था। ललितपुर से चलते समय हम लोगों के पास दो पते थे। पहला डॉ. गगन प्रकाश श्रीवास्तव जो झाँसी के रहने वाले थे तथा टाटा मेमोरियल में डाक्टर थे दूर के रिश्तेदार भी थे और दूसरा मेरे छोटे भाई के दामाद जो रेलवे में ड्राईवर थे उनका मकान खाली पड़ा था क्योंकि वह ट्रान्सफर करा कर झाँसी आ गए थे। करीब 3.30 बजे मैं अपने पुत्र के साथ टाटा मेमोरियल हास्पिटल पहुंचा सारा सामान बैग आदि अपने साथ लिए थे पहुंच कर कार्ड बनवाया तथा पर्चा तैयार कर दे दिया ऊपर "मंजिल पर सामान लेकर गए जहाँ डाक्टर ओ.पी.डी. में बैठकर देखते थे तथा समय अधिक हो जाने के कारण भीड़ भाड़ नहीं थी (मंगलवार का दिन) पर्चा काऊंटर पर जमा किया। झाँसी के रहने वाले डॉ. गगन प्रकाश श्रीवास्तव जो टाटा हॉस्पिटल में डाक्टर थे उन्हें अपने मोबाइल से अपना परिचय देते हुए लड़के ने फोन किया। डाक्टर ने मोबाइल पर बताया कि वह इतने नम्बर कमरा में बैठे हैं आ जाओ। जहाँ हम लोग खड़े थे उसी के पास वह कमरा था। मैं अपने पुत्र नितिन के साथ अपनी पुरानी इलाज की फाइलें लेकर डाक्टर साहब के कमरे में गया उन्होंने हम लोगों को बैठाया तथा मेरे झाँसी, पी. जी.आई. लखनऊ में किये गये इलाज की पत्रावली देखी जिसमें कैंसर की पुष्टि थी। सारी रिपोर्ट देखकर उन्होंने फिर मेरा परीक्षण किया तथा जहाँ फाइल तैयार होती थी। उस डाक्टर को फोन कर दिया और कहा मैंने श्याम मनोहर का परीक्षण कर लिया है इनकी फाइल तैयार कर दो तथा जो दवा देनी थी उसका नाम बता दिया। डाक्टर ने बताया कि इलाज शुरू हो गया है तथा जो दवा पर्चे में लिखवाई उसको लेते रहना इससे कैंसर बढेगा नहीं रोक लग जायेगी। डॉक्टर ने यह बताया कि सारी जाँचे पुरानी हो गई थी। बम्बई में पन्द्रह दिन रहकर पूरी जांचे दुबारा कराई। डाक्टर ने जाँच के उपरान्त बताया कि प्रोस्टेट कैंसर है तथा इसको बढ़ने से रोकने हेतु प्रत्येक तीन माह में जब तक जिन्दा हो एक इन्जैक्शन लगेगा तथा दवा भी चलेगी तथा झाँसी में एक छोटा सा आपरेशन कराने हेतु डाक्टर सावल को पत्र लिखा।

इतने बड़े बम्बई जैसे शहर में डाक्टर तथा रहने और खाने पीने की व्यवस्था गुरुदेव जी की कृपा से बहुत अच्छी हो गई थी। बदलापुर स्टेशन पास दामाद के खाली मकान में रहे मकान पर

सारी व्यवस्था ओढने बिछाने के कपड़े मनोरंजन के लिए टी.वी. तीन कमरे का फ्लैट पास ही में खाने की व्यवस्था सभी प्रभूजी की कृपा से सुलभ हो गया था।

माह अक्टूबर 2015 में दिनांक 24 रक्षा बन्धन के अवसर पर हम लोग टाटा हॉस्पिटल बम्बई से वापिस आ गए तथा तीन महीने समय पुनः परीक्षण कराने हेतु समय दिया। रक्षा बन्धन के उपरान्त मैंने 6 सितम्बर 2015 को झाँसी जाकर डॉक्टर के लिखे अनुसार ऑपरेशन कराया तथा एक माह के अन्दर दिखाने को गया। एक माह बाद झाँसी के डॉक्टर ने खून की जाँच कराई तथा मेरा परीक्षण कर एक माह की दवा और दी।

माह नवम्बर 2015 में मुझे पुनः कैंसर की जाँच कराने एवं इन्जैक्शन लगवाने एवं दवा लेने हेतु टाटा मेमोरियल हॉस्पिटल बम्बई जाना था। मेरी तीव्र इच्छा थी कि बम्बई जाने से पूर्व मैं आश्रम सिद्धगुफा जाकर गुफा के दर्शन कर आऊँ। मैंने आश्रम में आदरणीय आचार्य श्री दासलाल जी से प्राणधन सद्‌गुरुदेव व श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के जन्म दिवस के कार्यक्रम की जानकारी ली। आचार्य जी ने अवगत कराया सिद्धगुफा संवाई धाम में 13 अक्टूबर से 21 अक्टूबर तक श्री मद्‌भागवत का आयोजन है तथा 22 अक्टूबर को गुरुदेव का जन्मोत्सव पूजन एवं भण्डारे का कार्यक्रम है।

मेरा इलाज जून 2015 से लगातार चल रहा था। बहुत कमजोरी आ गई थी। कहीं भी अकेले नहीं जा सकता था। मैंने कई लोगों से आश्रम चलने के लिए कहा परन्तु कोई तैयार नहीं हुआ। मैंने सिद्धगुफा संवाई आश्रम अकेले जाने का निश्चय कर ट्रेन से जाने – आने का रिजर्वेशन कराया और सामान का बैग लेकर दिनांक 20.10.2015 के दोपहर आश्रम पहुँचा। आश्रम पहुँच कर श्री सिद्धगुफा के दर्शन कर सभी स्थानों पर प्रणाम किया तथा बाद में आचार्य दासलाल जी भाई से उनके कक्ष जाकर प्रणाम कर ठहरने के स्थान की जानकारी ली। भाई जी ने कमरे ठहरने हेतु अन्य भाईयों के साथ ठहरने का स्थान बताया। इस पर मैंने भाईजी से अपने रोग कैंसर होने की बात बताई तथा ठहरने हेतु अलग एक कमरे की व्यवस्था के लिए निवेदन किया। भाई जी ने तत्काल एक ब्रह्मचारी बुलाया तथा गुरुदेव भगवान जहाँ दातुन करते थे उस स्थान पर बने कमरे की चाबी मंगाई और मुझे देकर ठहरने की व्यवस्था कराई। उस समय आश्रम में भोजन प्रसादी चल रहा था। आचार्य जी ने कहा सामान रखकर पहले प्रसाद पालो। मैंने आदेशानुसार भोजन प्रसाद पा लिया।

सायं काल 3 बजे से श्रीमद्‌भागवत का कार्यक्रम शुरू हुआ। आनन्द से भागवत सुनी। मैं आश्रम में 4 दिन रुका तथा गुरुदेव भगवान के जन्मोत्सव पर पूजन आदि किया। जब तक मैं आश्रम में रहा दोनों समय सभी स्थानों पर प्रभूजी के दर्शन एवं प्रणाम किया करता था। गुफा के अन्दर प्रणाम करके प्रभूजी से प्रार्थना करता था कि प्रभूजी चमत्कार करके मेरा कैंसर रोग ठीक कर दो क्योंकि सभी मिलने वाले कहते थे कि मैं तो इतने बड़े योगीराज का शिष्य हूँ मुझे यह रोग कैसे हो सकता है। इसी बात को लेकर मेरे मन में यह प्रार्थना करने की इच्छा हुई। आश्रम से चलने के पूर्व आज्ञा लेते समय आचार्य दासलाल जी से उक्त रोग ठीक , होने हेतु रज परसाद लिया।

आश्रम मे चार दिन रुकने के बाद मैं अपने निवास स्थान ललितपुर आ गया।

तीन महीने के अन्दर यानी 23.11.2015 को मुझे परीक्षण हेतु टाटा मेमोरियल हॉस्पिटल, बम्बई जाना था। अतः मैं 22.11.2015 को ललितपुर से चल कर 23.11.2015 को टाटा हॉस्पिटल, बम्बई पहुँच गया। दिखाने हेतु नम्बर लगाया। करीब 3 बजे नम्बर आ गया जिन डॉक्टर ने पहले देखा था वह अवकाश पर थे उनके स्थान पर दूसरे डॉक्टर ने देखा। फायल में रिपोर्ट देखने के बाद कहने लगे कि अरे भाई तुम को तो कैंसर है तथा जब तक तुम जिन्दा रहोगे हर तीन महीने में इन्जैक्शन लगवाने आना पड़ेगा। इस पर मैंने झाँसी के डाक्टर सांवल की रिपोर्ट एवं ब्लड–टैस्ट की रिपोर्ट जो उन्होंने देखी नहीं थी तथा दूसरी फायल में थी दिखाई तो देख कर चकित रह गये और बहुत देर तक मुझे देखते रहे। इस पर उन्होंने कहा चलो जाँच करें। अन्दर ले जाकर जाँच की और बोले तुम्हारा कैंसर एक तरह से खत्म है अब तो इन्जैकशन की भी आवश्यकता नहीं है। मामूली सी दवाइयाँ ताकत, कैलसियम आदि की लिख कर पुनः परीक्षण हेतु 3 महीने में बुलाया।

फरवरी माह 2016 को 3 माह में मैं ब्लड–टैस्ट कराकर टाटा मेमोरियल हॉस्पिटल बम्बई गया। वहाँ डॉक्टर ने ब्लड रिपोर्ट देखकर तथा एक दवा कैलसियम की तीन माह के लिए देकर फिर तीन महीने में परीक्षण हेतु बुलाया है। इस प्रकार श्री गुरुदेव भगवान ने अपने भक्त पर चमत्कार दिखा कर कृपा की। जब सभी मिलने वाले भाईयों, दोस्तों तथा रिश्तेदारों को प्रभूजी की कृपा की जानकारी हुई तो सुनकर दंग रह गये।

कुलीनता बाप दादों के देने से नहीं मिलती। जो चरित्रवान, सज्जन और नीतिवान है, वह चाहे जैसे कुलीन को भी वश में कर सकता है। नीचा खानदान या छोटा खानदान, ऊँचा खानदान या बड़ा खानदान ये सब बातें भूल जाइये। बादशाही भी धूल में लोट सकती है।

योग-आसन

नमस्कार आसन

विधि – साधारण रूप से समसूत्र स्थिति में खड़े रहकर छाती के सामने अपने दोनों हाथों को इस प्रकार जोड़ों जिस प्रकार किसी को सादर नमस्कार करते समय जोड़े जाते हैं। दोनों हाथों को दृढ़ता से तनाव के साथ जोड़ों, छाती को थोड़ा आगे को तनाव दें, पेट को थोड़ा सिकोड़ कर दोनों भुजदण्डों को भी दृढ़ रखो। इसी को नमस्कार आसन कहते हैं।

इस आसन में सम सूत्रता का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये। सम सूत्रावस्था से मेरुदण्ड भी सीधा रहता है। मेरुदण्ड का सीधा रहना योगासनों में भी यथासम्भव बहुत आवश्यक बताया है मेरुदण्ड का सीधा रहना शरीर के सारे स्वास्थ्य का मूलाधार है, जिसका मेरु कमजोर पड़ जाता है उसके शरीर की सारी स्थिति बिगड़ जाती है। अंत: इस सूर्य नमस्कारासन में मेरुदण्ड को समास्थिति में रखना निहायत आवश्यक है। शरीर झुकाकर चलने व बैठने की जिन्हें आदत पड़ जाती है ये बहुत जल्दी अपने स्वास्थ्य को खो बैठते हैं व बुढ़ापे के शिकार बन जाते हैं। इस सूर्य नमस्कारासन में तो मनुष्य को सम सूत्रता का विशेष रूप से ध्यान रखना ही चाहिये। इसके अतिरिक्त चलते–फिरते उठते–बैठते हर व्यक्ति को अपने मेरु दण्ड को सीधा रखने का पूरा–पूरा ध्यान रखना चाहिये।

श्री मद्भागवत में योग–परिचर्चा

डॉ. विजय सिंह

हिरण्यकशिपु को अपने भाई के बध से दु:ख हुआ। उसने दैत्यों को आदेश किया कि पृथ्वी पर जहाँ कहीं यज्ञ, देवपूजन हो रहा हो उसे नष्ट–भ्रष्ट करो। दूसरी ओर अपनी माता दिति को मधुर वाणी में समझाते हुये कहा– तुम सभी वीर हिरण्याक्ष के लिये शोक नहीं करो। आत्मा नित्य, अविनाशी, शुद्ध, सर्वगत, सर्वज्ञ और इन्द्रिय–देह से पृथक है। अविद्या के कारण आत्मा देह आदि की सृष्टि करके भोगों के साधन सूक्ष्म शरीर को स्वीकार करता है –

नित्य आत्माव्ययः शुद्धः सर्वगः सर्ववित्परः।

घत्तेऽसावात्मनो लिङ्गं मायया विसृजन् गुणाना ।।22।। (अ.2, स्क.7)

उसने उसीनर देश के राजा सुयज्ञ के मारे जाने पर मर्माहत् कुटुम्बियों को यमराज ने जो उपदेश दिया था उसको अपने माता आदि स्वजनों को सुनाया। विलाप करते कुटुम्बियों के सामने बालक के वेष में स्वयं यमराज आये और कहा – आप सभी मुझसे बड़े हैं। कितनों को मरते हुये देखा होगा। सबको एक–न–एक दिन मरना है। आप सबसे तो मैं अच्छा हूँ। माँ–बाप ने त्याग दिया। हिंसक जन्तु हमारा बाल भी बाँका नही कर पाते। भला जिसने गर्भ में रक्षा की थी, वही जीवन में भी रक्षा करता रहता है।

रानियों ! पूर्व जन्मों की कर्मवासना के अनुसार मृत्यु का समय निश्चित है और पुनः जन्म भी। परन्तु आत्मा जन्म–मृत्यु से अछूता है। समझो ! काठ में रहने वाली अग्नि काठ से अलग है। देह में रहने वाला वायु का देह गुणों से कोई संबंध नहीं है। आकाश सब जगह एक सा रहने पर भी किसी दोष–गुण से लिप्त नहीं होता। इसी प्रकार देहेन्द्रियों में रहने वाला और उनका आश्रय आत्मा भी अलग और निर्लिप्त है। अतः तुम सभी सुयज्ञ के लिये जो शोक कर रहे हो वह मूर्खता पूर्ण है –

यथानलो दारुषु भिन्न ईयते

यथानिलो देहगतः पृथक स्थितः।

यथा नभः सर्वगतं न सज्जते

तथा पुमान् सर्वगुणाश्रयः परः।।43।। (अ.2, स्क.7)

जब तक आत्मा पाँच प्राण, पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय बुद्धि और मन से बने लिङ्ग शरीर (महाकारण) से युक्त रहता है, तभी तक कर्मों से बँधा रहता है। इस बन्धन के कारण ही माया से होने वाले मोह और क्लेश बराबर उसके पीछे पड़े रहते हैं।

इसलिये शरीर और आत्मा का तत्व जानने वाला ज्ञानी पुरुष, अनित्य शरीर या नित्य आत्मा के लिये कभी शोक नहीं करते। परन्तु अज्ञानी जन अविद्या के प्रभाव में शोक करते रहते हैं।

यमराज बालक रूप धारी ने कहा– एक जंगल में बहेलिया रहता था। वह पक्षियों का काल ही था। एक दिन उसने कुलिङ्ग पक्षी के एक जोड़े को चारा चुगते देखा। बहेलिये ने कौशल पूर्वक मादा पक्षी को शीघ्र ही फँसा लिया। कालवश वह जाल के फंदों में फँस गयी। नर पक्षी स्नेहवश विलाप करने लगा। वह अपने छोटे–छोटे बच्चों को याद कर विहवल हुआ क्रंदन करता रहा तभी काल की प्रेरणा से पास ही छिपे बहेलिये ने उसे भी बाण से मार डाला। अतः मूर्ख रानियों। तुम सभी वर्षों शोक परवश क्रंदन करती रहो अब तुम इसे नहीं पा सकोगी।

छोटे बालक की ज्ञान पूर्ण बातें सुन कर उसी नरेश के कुटुम्बी–जन को समझ में आगया कि समस्त संसार और इसके सुख–दुःख मिथ्या हैं। उनका अज्ञान जाता रहा। पुत्रवधू के साथ विति ने हिरण्यकशिपु की यह बात सुनकर पुत्रशोक त्याग अपना चित्त परमात्मा में लगा सप्तम् स्क. के तीसरे अध्याय में हिरण्यकशिपु की तपस्या और वर प्राप्ति की कथा कही गयी है।

हिरण्यकशिपु अमरता प्राप्त करने के लिये मंदराचल की घाटी में आकाश की ओर देखता हुआ दारुण तपस्या में लग गया। उसके उग्र तप तेज से लोका–लोक जलने लगे। स्वर्ग के देवता घबरा उठे। ब्रह्मा जी के पास जाकर प्रार्थना करने लगे–हे जगत निर्माषक प्रभो ! इस तप् तेज से हम सभी आक्रांत हो उठे हैं। इस ज्वाला को आप शांत कर दीजिये।

प्रभो ! वह अपनी तपस्या और योग के प्रभाव से सत्यलोक जीत कर उसका अमर स्वामी बनना चाहता है। वह जानता है समय असीम है और आत्मा नित्य है। एक जन्म में नहीं, अनेक जन्मः एक युग में नहीं सही अनेक युगों में तो मैं तपन्योग से अमरता प्राप्त कर ही लूँगा –

तस्यायं किल संकल्पश्चरतो दुश्चरं तपः।
श्रूयतां किं न विदितस्तवाथाति निवेदितः ।।8।।

सृष्ट्वा चरा चर मिदं तपो योगसमाधिना।
अध्यास्ते सर्वधिष्ण्येभ्यः परमेष्ठी निजासनम् ।।9।।

तदहं वर्धमानेन तपोयोगसमाधिना।
कालात्मनोश्च नित्यत्वात्साधयिष्ये तथाऽऽत्मनः ।।10।। (अ.3, स्क.7)

देवताओं के प्रार्थना पर ब्रह्माजी, भृगु एवं प्रजापति हिरण्यकशिपु के आश्रम पर गये। उसका शरीर दीमक घास से ढ़क गया था। चिंटियाँ उसके शरीर के मेदा, त्वचा माँस और खून चाट गयी थीं। उसके तप को देखकर ब्रह्मा जी भी आश्चर्य चकित हो गये। उसका प्राण हड्डियों के सहारे टिके हुये हैं। वे बोले–बेटा हिरण्यकशिपु तुमने अपने तपोनिष्ठा से मुझे वश में कर लिया है। तुम हो मरने वाले और मै हूँ अमर अतः तुम वर माँगो। मेरा दर्शन निष्फल नहीं हो सकता।

इत्युक्त्वाऽऽदिभवो देवो भक्षिताङ्गं पिपीलिकैः।
कमण्डलुजलेनौक्षद्दिव्ये नामोघराधसा।।22।।

स तत्कीचकवल्मीकात् सहओजोबलान्वितः।

सर्वावयवसम्पन्नो वज्रसंहननो युवा।

उत्थितस्तप्तहेमाभो विभावसुरि वैधसः।। 23।। (अं.3, स्क.7)

ऐसा कहते हुये श्री ब्रह्मा जी ने उसके कंकाल मात्र शरीर पर अपने कमण्डलु का दिव्य एवं अमोघ जल छिड़का। आश्चर्य ! जल छिड़कते ही वह हृष्ट–पुष्ट कांतिवान होकर दीमकों की मिट्टी से उठ खड़ा हुआ। उसने हंसारुढ़ भगवान ब्रह्मा जी को आकाश में देखकर विनम्रता पूर्वक प्रणाम किया। उत्तम स्तुति गदगद् कण्ठ से करने लगा। प्रसन्न हुये ब्रह्मा जी से बोला– प्रभो ! यदि आप मुझे अभीष्ट वर देना चाहते हैं तो मुझे ऐसा कर दीजिये कि आप द्वारा सृष्टि किये गये किसी प्राणी–मनुष्य हो या पशु, प्राणी हो या अप्राणी देवता हो या दैत्य अथवा नागादि किसी से भी मेरी मृत्यु न हो।

भीतर–बाहर, दिन में, रात्रि में, अस्त्र–शस्त्र, पृथ्वी या आकाश में कहीं भी मेरी मृत्यु न हो। युद्ध में मेरा कोई सामना न कर सके। मैं समस्त प्राणियों का एकछत्र सम्राट हो जाऊँ। इन्द्रादि समस्त लोकपालों में जैसी आपकी महिमा है, वैसी ही मेरी भी हो। तपस्वियों और योगियों को जो अक्षय ऐश्वर्य प्राप्त है, वही मुझे भी दीजिये –

सर्वेषां लोकपालानां महिमानं यथाऽऽत्मनः।

तपोयोगप्रभावाणां यन्न रिष्यति कर्हिचित्।। 38।। (अं.3, स्क.7)

ब्रह्मा जी ने तथास्तु ! कह उसे वर दे दिये।

ब्रह्मा जी से अपूर्व वरदान प्राप्त कर हिरण्यकशिपु अपार अत्याचार करने लगा। सप्तम स्कन्ध के चौथे अध्याय में हिरण्यकशिपु द्वारा अपने पुत्र धर्मात्मा प्रहलाद पर नाना अत्याचार करने तथा प्रहलाद् जी के भागवत् निष्ठा का वर्णन किया गया है। दुर्लभ वरदान के मद में चूर उसने सम्पूर्ण राजाओं, दिकपालों को हराकर उनको वैभव हीन कर दिया। इन्द्र को पराजित कर विश्वकर्मा द्वारा बनाया इन्द्र का भवन उसने अपने उपभोग में ले लिया। सुगंधित मंदिरा पीकर मतवाला हुआ उस समय तपस्या, योग, शारीरिक और मानसिक शक्ति का वह भंडार था। ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव जी के सिवा सभी देवता–असुर उसकी सेवा में लगे रहते –

तमङ्ग मत्तं मधुनोरुगन्धिना

विवृत्तताम्राक्षमशेषधिष्ण्यपाः।

उपासतोपायनपाणिभिर्विना

त्रिभिस्तपोयोगबलौजसां पदम् ।।13।।

गन्धर्व, सिद्ध, ऋषिगण, विद्याधर और अप्सराएँ उसकी स्तुति करते रहते थे। यज्ञों की आहुति वह स्वयं छीन लेता था। उसके कठोर शासन से त्रस्त देव, लोकपाल भागवान के शरण में गये। उसके जीवन का अब तक बहुत समय बीत गया था। देवताओं ने इन्द्रियों का संयम और मन को समाहित करके निर्मल हृदय से भगवान की आराधना किया – " **इति ते संयतात्मानः समाहितधियोऽमलाः** " देवताओं ने आकाश वाणी सुनी–श्रेष्ठ देवताओं ! डरो मत मेरे दर्शन से तुम

सबों का कल्याण होगा। मुझे सब पता है। जब वह अपने पुत्र प्रहलाद से द्रोह करेगा, उसका अनिष्ट करना चाहेगा उस समय मैं उसे अवश्य मार डालूँगा।

प्रहलाद हिरण्यकशिपु के चार पुत्रों में सबसे छोटे सत्य प्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय, सर्व जन हितैषी थे। प्रहलाद बचपन में ही खेलकूद छोड़कर भगवान के ध्यान में जगत् की सुध–बुध छोड़ जड़वत तन्मय हो जाया करते थे –

न्यस्तक्रीडन को बालो जडवत्तन्मनस्तया।

कृष्णग्रहगृहीतात्मा न वेद जगदी दृशम् ।।37।। (अ.4, स्कं.7)

उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि भगवान सदैव उनको गोद में लिये हुये हैं। कभी भगवान के ध्यानानन्द में मस्त जोर से गाने लगते, प्रेम में सुध–बुध खो नाचने लगते। कभी भीतर ही भीतर प्रभु स्पर्श पाकर आनन्दमग्न हो जाते और शांत बैठे रहते। प्रह्लाद भगवान के परम प्रेमी भक्त, परम भाग्यवान और उच्चकोटि के महात्मा थे– ऐसे निरपराध बालक का अनिष्ट करने की चेष्टा हिरण्यकशिपु करने लगा –

तस्मिन्महाभागवते महाभागे महात्मनि।

हिरण्यकशिपू राजन्नकरोदघमात्मजे।।43।। (अ.4, स्कं.7)

युधिष्ठिर जी ने नारद जी से इस अस्वाभाविक वैर (पिता–पुत्र में प्रेम) का कारण जानने हेतु प्रश्न किया। स्कन्ध सात के पंचम अध्याय में उपरोक्त प्रश्न का उत्तर तथा हिरण्यकशिपु के द्वारा प्रहलाद जी के बध का प्रयत्न की कथा वर्णित है।

शण्ड और अमर्क श्री शुक्राचार्य जी के पुत्र प्रहलाद को नीति निपुण बनाने हेतु, अध्यापक नियुक्त किये गये थे। एक दिन हिरण्यकशिपु स्नेह करता हुआ प्रहलाद जी को गोद में लेकर पूछा– बेटा! बताओ तो सही, तुम्हें कौन सी बात अच्छी लगती है ?

प्रहलाद जी ने कहा– पिता जी ! संसार के प्राणी मैं और मेरे के पचड़े में पड़कर सदैव उद्विग्न रहते हैं। इस अध.पतन से निकलने का एक रास्ता है वह है, भगवान श्री हरि की शरण ग्रहण करना। हिरण्यकशिपु ने आचार्यो को कड़ा हिदायत दिया कि प्रहलाद पर शासन करें वह हमारे शत्रु हरि का प्रशंसक कैसे बनता जा रहा है।

आचार्यो ने प्रहलाद जी से पूछा– बेटा ! मैं तो कुछ और पढ़ाता हूँ तुम श्री विष्णु की बातें किससे सीखते हो। प्रहलाद जी ने कहा – गुरु जी ! जैसे चुम्बक के पास लोहा स्वयं खिंचा आता है, वैसे ही चक्रपाणी भगवान की स्वतंत्र इच्छाशक्ति से मेरा चित्त संसार से अलग होकर बलात उनकी ओर खिंच जाता है –

यथा भ्राम्यत्ययो ब्रह्मन स्वयमाकर्षसन्निधौ।

तथा मे भिद्यते चेतश्चक्रपाणेर्यदृच्छया।।14।। (अ.5, स्कं.7)

ऐसा उत्तर सुनकर आचार्य ने प्रहलाद को भिड़कते हुये भिन्न–भिन्न दण्डों द्वारा भयभीत

करने की चेष्टा की परन्तु प्रहलाद जी विनम्र, सम बने रहे। अल्पकाल में ही गुरुओं द्वारा अर्थ, धर्म एवं कामसम्बंधी शिक्षा पढ़कर घर लौटे। माता ने लाड़–प्यार से प्रहलाद जी को सुसज्जित कर हिरण्यकशिपु के पास ले गयीं। प्रहलाद जी ने पिता के चरणों में लेट कर प्रणाम किया। हिरण्यकशिपु ने आनन्द से प्रहलाद को गोद में बैठाकर उनका सिर सूँघा। उसने अपने पुत्र से पूछा– इतने दिनों में गुरु जी से जो ज्ञान प्राप्त किये हो उसमें से कोई उत्तम बात हमें सुनाओ। प्रहलाद जी ने कहा – पिता जी ! श्री विष्णु भगवान की भक्ति

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।

अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।। 23।। (अ.5, स्कं 7)

की जाय उसे ही हम उत्तम अध्ययन समझता हूँ। यह सुनते ही हिरण्यकशिपु क्रोध से कापता हुआ आचार्यो की बड़ी भर्तसना किया। डरते हुये गुरुओं ने अपनी सफाई देते हुये कहा– इन्द्रशत्रो! व्यर्थ में हमें दोष न लगाइये। राजन! इसकी जन्मजात स्वाभाविक बुद्धि ऐसी है। हिरण्यकशिपु ने क्रोध से भरकर प्रहलाद को गोद से उठा कर जमीन में पटक दिया। और दैत्यों को आदेश देते हुये कहा – ले जाओ ! इसे मार डालो। जैसे योगी की भोग लोलुप इन्द्रियाँ उसका अनिष्ट करती हैं, वैसे यह मेरा अहितकर्ता है।

दैत्य प्रहलाद जी के मर्मस्थानों में शूल से घाव करने लगे, परन्तु उनके सारे प्रहार भाग्यहीनों के उद्यम जैसे निष्फल हो जाते हैं, व्यर्थ हो गये क्योंकि उस समय प्रहलाद जी का चित्त परमात्मा में लीन था जो मनवाणी के अगोचर, सर्वात्मा, समस्त शक्तियों के आधार एवं परब्रह्म हैं।

हिरण्यकशिपु बड़ी शंका में पड़ गया कि इस बालक पर शूलों के प्रहार का असर क्यों नहीं हुआ। वह हठी आगे मतवाले हाथियों से कुचलवाया, विषधरों से डँसवाया, पहाड़ की चोटी से फिकवाया, अनेक मायावी असुरों से त्रास दिलवाया परन्तु निष्पाप प्रहलाद का तनिक भी अनिष्ट नहीं हुआ।

आचार्य कुल में रहते हुये श्री प्रहलाद जी द्वारा असुर बालकों को उपदेश का विवरण सप्तम स्कन्ध के अ. 6 में किया गया है। प्रहलाद जी ने कहा – मित्रों ! इस संसार में मनुष्य–जन्म बड़ा दुर्लभ है। इसके द्वारा अविनाशी परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है। इन्द्रिय सुख तो चाहे जिस योनि में हो वहाँ मिलता ही है। मित्रों ! भगवान को प्रसन्न करने के लिये बहुत परिश्रम या प्रयत्न नहीं करना पड़ता क्योंकि वही सभी की आत्मा सब में विद्यमान हैं। यह विज्ञान सहित ज्ञान विशुद्ध भागवत धर्म है। इसे मैंने भगवान का दर्शन कराने वाले देवर्षि नारद से सुना था।

आश्रम समाचार

महाप्रभु श्री रामलाल जी का जन्मोत्सव एवं महायोग सम्मेलन

गत वर्षों की भाँति चैत्र रामनवमी जो योग योगेश्वर श्री रामलाल जी का प्राकट्य दिवस है, सिद्धगुफा, सँवाई आश्रम पर दिनांक 13, 14 व 15 अप्रैल को बड़े ही धूम–धाम से मनाया गया।

देश के भिन्न–भिन्न प्रान्तों से योग–मार्ग के पथिक साधक साधिकायें, योग प्रचारक, योग प्रेरक विद्वान एवं अनुभवी महानुभाव उपस्थित हुये।

13 अप्रैल को प्रातः 4 बजे की आरती में बहुत बड़ा समुदाय समवेत स्वर में सदगुरु भगवान की आरती विद्वान आचार्य डॉ. दासलाल जी के निर्देशन में पूर्ण एकाग्रता एवं आर्तभाव से किया। आरती के उपरान्त भगवत गीता का सस्वर गायन–पाठ गुफा प्रांगण मे आचार्य जी ने कराया। इसके पश्चात सभी मौन – ध्यानाभ्यास में एक घण्टे बैठे।

प्रातः 6 बजे से 9 बजे तक स्वरूपों का तथा मन्दिर का श्रृंगार पुष्प हारों से होता रहा जो बड़ा ही मनोहारी था।

प्रातः 9:30 बजे पुनः आरती तथा गुरु गीता का पाठ श्री आचार्य जी तथा बीसियों विद्वान आश्रम वासी ब्रह्मचारी गण के साथ आगत साधक समुदाय ने किया। गुरुतत्व आनन्दकन्द श्री महाप्रभु जी के तात्विक स्वरूप पर आचार्य जी ने विशद विद्धता पूर्ण प्रवचन किया। बाहर से आये श्री गुरुदेव भगवान के पुराने शिष्य डॉ. विजय सिंह, श्री सोमदत्त शर्मा जी, एवं डॉ. विरेन्द्र स्वरूप ने अपने भाव–सुमन को शब्दों के द्वारा श्री महाप्रभुजी के चरणों में निवेदन करते रहे। हजारों की संख्या में दूर दिगन्त से आये साधक श्रोतागण दिव्य प्रवचन प्रवाह में एकाग्रचित हो लगभग एक बजे अपरान्ह तक सुनते रहे।

घण्टा–निनाद के साथ दोपहर प्रसाद पाने की सूचना दी गयी। बड़े ही अनुशासित ढंग से स्त्री–पुरुष, बाल–गोपाल प्रभु प्रसाद पाये। अल्प विश्राम बाद अपरान्ह 3 बजे से महिला सतसंग प्रारम्भ हुआ। जिसमे समर्पण, भक्तियुक्त, भजनों का गायन वाद्य यंत्रों के साथ लगभग 6:30 तक चलता रहा। तालाब की तरफ बने लान पर साधक समुदाय अलग–अलग बैठकर आपस में श्री गुरुदेव भगवान के योगेश्वर्य, उनकी कृपालीला का संस्मरण सुनातें भाव–विह्वल होते रहे। सायं 7 बजे से संगीत मण्डली सँवाई, झाँसी, वाराणसी अपने – अपने भाव सुमन संगीत के माध्यम से विराजमान की महाप्रभु जी एवं गुरुदेव स्वरूप के समक्ष अर्पण करते रहे। रात्रि 9 बजे पुनः आरती तथा समवेत स्वर में हजारों लोगों द्वारा " निर्वाणास्टक " गाया गया। " प्रभो पाहि आप नमामिशम्भो " का हजारों कण्ठ से उच्चारित ध्वनि, ताल–मजीरा, हारमोनियम, झाँझ एवं शंख

ध्वनि से मिश्रित होकर एक अलौकिक दृष्य जिससे स्वतः मन सबका स्थिर होता जा रहा था। लोग ध्वनि करते हुये अन्तर में भगवान शिव के स्वरूप में भवलीन हो रहे थे।

सम्पूर्ण सप्तमी की तरह 14 अप्रैल अष्टमी को भी सब कार्यक्रम यथावत हुआ। आज आचार्य डॉ. दासलाल जी के सम्बोधन के पश्चात श्री गुरुदेव भगवान के पुराने योगनिष्ठ साधक श्री हरि सिंह मण्डी (हि.प्र.) तथा प्रो. मनमोहन कृष्ण ने संस्मरण सुनाकर श्रोताओं को अतीत की स्मृतियाँ मानस पटल पर जाग्रत कर दिये। समुदाय आज बहुत बढ़ गया था। अनुमानतः दसियों हजार अनुरागी साधक, साधिकायें कलकत्ता, बिहार, झारखण्ड, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, दिल्ली, उ.प्र., राजस्थान आदि जगहों से झुण्ड के झुण्ड आते जा रहे थे। सबके भोजन आदि की समुचित व्यवस्था आश्रमवासी ब्रह्मचारियों के सहायता से एवं स्वस्फूर्त सेवा प्रदान करने वालों की वजह से बहुत अच्छी प्रकार से नियोजित होता रहा। आज विशेषतः सायं काल यौगिक क्रियाओं का प्रदर्शन, योगाचार्य राजकुमार, ब्रह्मचारी महावीर जी आदि ने विद्वान डॉ. दासलाल जी के निर्देशन में किया।

नवमी 15 अप्रेल को जयपुर से आये भाई योग प्रचारक श्री मनोहर तिवारी जी ने बहुत ही बेशकीमती स्वरूपों के लिए पोशाक लाये थे जिसको साधिकाओं ने और भाइयों ने मिलकर श्रृंगार किया। प्रातः 9 बजे की आरती के पश्चात आश्रमवासी ब्रह्मचारियों ने सर्वप्रथम पूजन किया उसके बाद साधक समुदाय लाइन में लगकर अपरान्ह चार बजे तक पूजन करते रहे। श्री सिद्धगुफा की रात्रि शोभा अपूर्व थी विद्युत मालाओं से प्रांगण और सामने का सड़क झिलमिलाता हुआ अलौकिक नजारा प्रगट करने वाला था। अष्ठमी एवं नवमी की पूरी रात्रि जागरण हुआ। श्रद्धालु गायक संकीर्तन एवं भजन से पूरी रात्रि आनन्द की धारा बहाते रहे। लोग मंत्रमुग्ध भाव से जगकर श्री प्रभुनाम गान में निमग्न रहे।

आज दिन में 12 बजे इधर पूजन का कार्य चलता रहा उधर नवनिर्मित विशाल भोजनालय के हाल में वेदपाठी ब्राह्मणों को आचार्य श्री दासलाल जी ने भोजन कराकर दक्षिणा अर्पित किया और फिर सतसंगी समाज प्रसाद पाने बैठा जो रात्रि तक चलता रहा। आयोजन कर्ता श्री वी. हरी जो बंगलोर से आये थे। वे आनन्दकन्द योगिराज जी चन्द्रमोहन प्रभु से 1989 में दीक्षा लखनऊ में लिया था। अकस्मात में गोशाला में बैठा था। उस समय हजारों की संख्या में लोग भण्डारे का महाप्रसाद ग्रहण कर रहे थे। वहीं एक सम्रांत युवक तीस–पैंतीस वर्ष का छः फुटा सौम्य स्वेत पैजामा–कुर्ता पहने खड़ा था। श्री मनमोहन कृष्ण जी से मैंने पूछा– यह नवागत व्यक्ति कौन है। उन्होंने बताया यही युवक इस वर्ष के महासम्मेलन का आयोजन कर्ता है। मैंने उससे परिचय किया। और पूछा आप श्री सद्‌गुरु के चरण–शरण में कब और कैसे आये ? विनय शील हरि ने बताया– भाई जी मैं और संजय सिसोदिया एक साथ मर्चेंट नेवी में थे। कुछ काल के बाद संजय मर्चेंट नेवी छोड़ अन्य जगह चले गये। वे हमेशा सद्‌गुरु योगिराज श्री चन्द्रमोहन जी के अलौकिक कृपाओं की कथा मुझे बताया करते थे। जाते समय एक छोटा छाया चित्र योगिराज का देते हुए मुझे कहा – हरी ! इन्हें मनुष्य नहीं

समझना जब कभी संकट में होना तो इनको स्मरण कर प्रार्थना करना तुम्हारा संकट चमत्कारिक ढंग से दूर हो जायेगा। ये अद्भुत योग ऐश्वर्य के मालिक अत्यन्त कृपालु हैं।

कालान्तर में एक घटना मेरे साथ घटी जो इन अहैतुक कृपा सागर के सानिध्य में मुझे लाने का कारण बना। आज मैं अमेरिका में ऊँचे पद पर कार्यरत हूँ। समृद्धि एवं मनः शान्ति दोनों ही इन प्रभु की कृपा से मुझे प्राप्त हैं। मैंने आतुरता से पूछा– भाई ! वह घटना बताइये।

सन् 1989 में मेराइन क्रूज पर मैं बाम्बे से समुद्र में लगभग दस किलोमीटर अन्दर गया उसी समय जहाज में पानी भरने लगा और जहाज एक ओर को झुकने लगा। कैप्टन ने हम सभी को संकट कालीन उपाय अपनाने को कहकर आगे गया। जहाज पर आपात कालीन उपाय होने लगा। मुझे इस संकट में मित्र संजय के द्वारा बताये गये संकट मोचन श्री सद्गुरु का स्मरण हो आया। हमने धैर्य धारण कर प्रार्थना कर रहा था कि उसी समय किसी ने कहा कि जहाज में पानी भरना बन्द हो गया है। और अब यह आपातकालिक रूप में पुनः बाम्बे तट पर ले जाया जायेगा। मैं श्री प्रभु जी के इस अद्भुत कृपा का स्मरण कर रोमांचित हो उठा। भाईजी ! फिर मैंने सबसे पहले इस बात की सूचना अपने मित्र संजय को दिया और नियत तिथि पर उसे लेकर सिद्धगुफा पर गुरुदेव भगवान का दर्शन करने गया। परन्तु उन दिनों श्री गुरुदेव भगवान कार्यक्रम लखनऊ में राजाजीपुरम में चल रहा था। मैं अपने मित्र के साथ लखनऊ जाकर श्री चरणों का दर्शन कर कृतकृत्य अनुभव किया और वहीं योग–दीक्षा प्राप्त किया। आज भी उन कृपानिकेतन जी का अभयप्रद वरदहस्त मेरे साथ है। आप सभी हमारे पुराने गुरुभाई हैं। आपको क्या उनकी महिमा बताना।

"यस्य प्रसादात् पतिता सुपावना"

आनन्दकन्द योग–योगेश्वर जी महाप्रभुजी की एवं श्री सद्गुरुदेव भगवान की कृपा लीलायें केवल शिष्यों पर ही नहीं अपितु जो भी उनको सच्चे आर्त मन से स्मरण करता है। उसका कल्याण होता ही होता है।

जागरूकता का अर्थ है अज्ञान का अभाव। व्यक्ति का यह समझना कि वह "यह है" अथवा "वह है" उसकी भूल है। केवल "मैं अस्तित्व हूँ" न कि "मैं ऐसा हूँ और वैसा हूँ" "मैं" आत्मा है। मैं यह हूँ अथवा, वह ही अहंकार है। अस्तित्व तुम्हारा स्वरूप है।

सद्गुरु सत्ता

कृष्ण कुमार पाण्डेय, गोरखपुर

महापुरुषों का अवतार इस धरा धाम पर लोक कल्याण के लिए होता है। इनका समय भी लोक कल्याण के लिए ही निश्चित होता है। वे महापुरुष अपने निर्धारित कार्य को करते हुए, तिरोहित हो जाते हैं। समाज को एक उचित मार्गदर्शन ही उनका लक्ष्य होता है। महापुरुषों का अवतरण किसी न किसी रूप में समय–समय पर होता ही है। महापुरुषों की यह स्वाभाविक वृत्ति होती है कि वे सदैव अपने को गोप्य रखे रहे। किन्तु निर्धारित समय में सांसारिक प्रपंचों में पड़े हुए मनुष्यों को चैतन्य करने का संकल्पित कार्य करते रहते हैं। कुछ ऐसे भी योगी महापुरुष हुए जो अपनी इच्छा शक्ति से एक ही समय में विभिन्न शरीर धारण करके कार्य करते हैं। किन्तु सामान्य पुरुष उनके कार्यो को समझ नहीं सकते हैं। हमारे सद्गुरुदेव योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज स्वयं अपने को महाप्रभु श्री राम लाल जी महाराज का कलछी ही कहते रहे। सद्गुरुदेव भगवान की यौगिक शक्ति का ज्ञान शायद ही साधक को हुआ हो। बात पुरानी है जब आदरणीय श्री पारस चाचा जो सद्गुरुदेव (योगीराज श्री चन्द्रमोहन) भगवान के गुरुभाई थे। उन्होंने सद्गुरु सत्ता और सद्गुरुदेव भगवान की संकल्पशक्ति की एक रहस्य युक्त कथा सुनाई थी। वैसे भी सद्गुरुदेव भगवान स्वयं अपने उपदेशों में सद्गुरु सत्ता का कभी खुले रूप में तथा कभी सांकेतिक रूप में करते रहते थे। सामान्य रूप से सद्गुरु की कृपा पाकर साधक कदाचित मौन हो जाता है। इसीलिए साधन के गूढ़ रहस्य सदा गूढ़ ही बने रहे। इस कलिकाल में शायद और गूढ़ हो गया। तुलसीदास जी ने अपने राम चरित मानस में लिखा कि – लुप्त भये सद्ग्रन्थ ।इसी तरह उपनिषदों के श्लोकों की संख्या भी कम हो गयी। जो संभवतः चौथाई ही रह गया है। कलिकाल का प्राणी संभवतः चमत्कार को नमस्कार करता है। उसे कदाचित एक क्षण के लिए ईश्वर से भी विश्वास समाप्त हो जाता है। व्यक्ति के अच्छे बुरे कर्म संस्कारों के कारण भी होता है। ऐसे ही क्लेश कर्मो की निवृत्ति के हुए सद्गुरु सत्ता संसारी जीवों के कल्याणार्थ आती है। संसार में आकर अपने संस्कारी साधकों का कल्याण प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कर जाती है। योगी कथामृत में एक कथा लाहिड़ी महाशय की है। जो सरकार के सैनिक विभाग में एकाउण्टेण्ट के पद पर कार्यरत थे। एक दिन उनके मैनेजर ने लाहिड़ी महाशय को अपने कार्यालय में बुलाया और कहा लाहिड़ी तुम्हारा स्थानान्तरण रानीखेत कार्यालय के लिए हो गया है। जहाँ एक सैनिक कार्यालय की स्थापना की जा रही है। लाहिड़ी तुरन्त ही नौकर के साथ उस सुदूर पर्वतीय अंचल के लिए प्रस्थान कर गये। वहाँ उनके लिए कोई अतिव्यस्तता का कार्य नहीं था। इसलिए उन्हें पर्वतीय दृश्यों को देखने में आनन्द आता था। वस्तुतः यह ज्ञान उनके सद्गुरुदेव बाबा जी की कृपा से स्वाभाविक हो गया था। उस पर्वत अंचल में सद्गुरुदेव (बाबाजी) को अपने योग्य शिष्य की बेसब्री से प्रतीक्षा थी। उस उदय काल का समय भी

आ गया। एक दिन लाहिड़ी महाशय दोण पर्वत की ऊँचाई पर पहुँच गये। जहाँ एक जगह समतल स्थान मिला। वहाँ चारों ओर छोटी–छोटी गुफाएँ थी। लाहिड़ी ने देखाकि– पर्वत प्रदेश में एक व्यक्ति मुस्कराते हुए हाथ फैलाए स्वागतार्थ खड़ा था। उनका केश ताम्रवर्णी तथा स्वरूप अपने जैसा देखा। उस व्यक्ति ने कहा – लाहिड़ी आ गये हो अच्छा हुआ। मैंने ही तुम्हें बुलाया है। तुम उस गुफा में (संकेत करते हुए) विश्राम करो। लाहिड़ी महाशय कुछ समझ नहीं पाये। लेकिन गुफा में प्रवेश किया, तो देखा अन्दर जगह साफ सुथरी थी। उसमें ऊनी कम्बल एवं कमण्डलु पड़ा हुआ था। उस व्यक्ति ने कहा– तुम उस आसन को पहचान रहे हो। उनका उत्तर था – नहीं ! पुन: लाहिड़ी ने बड़े भाव विह्वल होते हुए कहा– महाराज ! मुझे नीचे जाने की अनुमति दें। अन्यथा हमें नीचे जाने में रात्रि हो जायेगी। प्रात: ही मुझे अपने ऑफिस भी जाना है। लाहिड़ी महाशय कुछ समझ भी नहीं पाये। संत ने रहस्य भरी मुस्कान छोड़ते हुए कहा– ऑफिस को तुम्हारे लिए ही यहाँ लाया गया है। न कि तुमको ऑफिस के लिये। पुन कहने लगे – लगता है यह मेरे तार भेजने के प्रभाव के कारण ऑफिस लाया गया है। लाहिड़ी महाशय अभी भी कुछ नहीं समझे। बाबाजी ने पुन: कहा– " यह गुफा तुमको सुपरिचित प्रतीत होती होगी। इतना सब कहने के बाद भी लाहिड़ी महाशय अभी अवाक् एवं अपरिचित बने रहे। सद्गुरु ने शिष्य के भावों को समझ गये। तब उस परम सद्गुरु सत्ता ने अपने कर को बड़े प्रेम से उन के सिर पर रखा। कर के स्पर्श होते ही, उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे शरीर में एक अद्‌भुत विद्युत की सी झंकार एवं तरंग प्रवाह का सञ्चार हो रहा हो। इससे उनके पूर्वजन्म की मधुर स्मृतियाँ जाग्रत हो उठी। वे अपने सद्गुरु को साक्षात प्राप्त कर उनके चरणों में गिर पड़े। आँखों से सात्विक अश्रुपात लगातार हो रहा था। आज कितनी मधुर वेला कि सद्गुरु सत्ता ने स्वयं अपने योग्य गृहस्थ एक निष्ठ साधक को स्वयं खीच लिया। लाहिड़ी अपने को धन्य मानते हुए गुरुदेव के चरणों में बारम्बार लोटते रहे।

सद्गुरुदेव ने मन्द मुस्कान डालते हुए कहा – तुम्हारी प्रतीक्षा तीन दशक से अधिक समय से कर रहा था। तुम्हारे कर्मजाल के संस्कार तुम्हें गृहस्थी में लगा दिये। यद्यपि तुम हमें वहाँ देख नहीं सकते थे किन्तु मैं तुम्हारी निगरानी निरन्तर करता रहता था। तुम्हारी मनुहारी शिशुलीला से लेकर आज तक तुम्हारे पीछे–पीछे मैं घूमता रहा। आज तुम मेरे पास आ ही गये। साधक यदि एक निष्ठ भाव से सदाचार का पालन करते हुए जीवनयापन करता है। तो निश्चय ही सद्गुरुदेव उसकी रक्षा सदैव करते रहते हैं। एक बार किसी साधक का पत्र संवाई धाम सद्गुरुदेव भगवान के पास आया। जिसमें साधक ने लिखा था। प्रभो मृत्यु भय दिखता है। अकारण करुणालय श्री सद्गुरुदेव भगवान बड़े गम्भीर किन्तु प्रसन्न मुद्रा में बोले– लल्ला लिखो यदि ऐसे ही हमारे बालकों की स्थिति होगी तो हमारा कार्य (लीला) कैसे होगा। मैं (लेखक) अपने को बड़ा धन्य समझने लगा। मेरे मन से भी यह भय सदा के लिए दूर हो गया। ऐसी सद्गुरु सत्ता जो सब कुछ करने में समर्थ है। आवश्यकता अपने को पूरी तरह समर्पित करने की है। लाहिड़ी महाशय के सद्गुरुदेव मिल गये। वे धन्य मानने लगे तथा वापिस जाने को ही भूल गये। सद्गुरुदेव ने कहा – देखो तुम्हारी कुटिया को कितना साफ

सुथरा किये हूँ। तुम्हारा आसन, कम्बल सब सुरक्षित है। तुम्हारी पीतल की कटोरी को कितना साफ कर रखा है। मेरे बच्चे अब तुम सब समझ गये होगे। लाहिड़ी महाशय सद्गुरु के सम्मुख मौन खड़े रहे। वे अपने जीवन एवं मरण का ध्यान दिये बगैर असीम आनन्द से भरे हुए अपने सद्गुरु को मात्र कर बद्ध निहारते रहे। सद्गुरु देव ने धीर गम्भीर वाणी में कहा – " लाहिड़ी यहाँ तुम्हारी शुद्धि आवश्यक है। देखो इस पात्र में तेल है। उसे पी लो तथा नदी के किनारे लेट जाओ। बाबा की स्नेहभरी आज्ञा का पालन कर उस तेल को पी गये तथा उसी प्रकार नदी के तट पर लेटने के बाद उस भयंकर हिम प्रदेश में अपने को गर्म महसूस कर रहे थे। ठण्ड का नामोनिशान नहीं था। सूनसान जगह पर आस–पास बाघों की गर्जना सुनायी पड़ रही थी। परन्तु सद्गुरु कृपा से भय स्वभावत: समाप्त हो गया। लाहिड़ी अपने अभेद्य रक्षण के प्रति पूर्ण आश्वस्त थे। कितने घण्टे वे लेटे रहे उनको कुछ आभास ही नहीं हुआ। इतना लम्बा समय उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो एक क्षण ही तो हुआ हो। महाशय अपने पूर्व अन्तरंग अनुभूतियों का आनन्द सद्गुरु कृपा से करते रहें।

सद्गुरु सत्ता की कृपा जब साधक पर पड़ती है तो साधक समुदाय के समस्त कार्य स्वाभाविक रूप से अनुकूल होते चले जाते हैं। साधक को धर्म से अपने साधन में लगे रहना चाहिए। यद्यपि इस कलिकाल में समाज में धर्म दिखता ही नहीं है। व्यक्ति जल्दी ही अधीर हो जाता है इसीलिए व्यक्ति सदैव परेशान दिखता है। साधक समुदाय को सदैव यह ध्यान होना चाहिए कि हमारे कर्म संस्कार पीछा छोड़ने वाले नहीं हैं। जैसाकि लाहिड़ी महाशय के साथ हुआ। कर्म संस्कार के कारण ही महाप्रभु (योगेश्वर श्री रामलाल जी महाराज) ने प्रयाग स्नान में आये अपने ही खास साधक समुदाय से नहीं मिले।

(क्रमशः)

अहंकार नहीं

वेदान्त बताता है कि शोक, हर्ष, भय, लोभ, क्रोध, मोह, स्प्रेहा, जन्म, मृत्यु आदि धर्म अहंकार के हैं, आत्मा के नहीं। सुषुप्ति अवस्था में इन व्याधाओं की प्रतीति नहीं होती, क्योंकि अहंकार आत्मा में लीन हो जाता है। आत्मा निर्विकार है।

गुरुदीक्षा के बाद मेरे अनुभव

महावीर सिंह चौहान, आगरा

मैंने संसारी व्यक्तियों से यह सुन रखा था कि जब तक गुरु नहीं बनाया जाता तब तक जो दान पुण्य किया जाता है उसका लाभ नहीं मिलता। इस लालच से मैं शीघ्र से शीघ्र गुरु बनाकर यह कार्य करना चाहता था। अतः अपने नियुक्ति के स्थान विकासखण्ड नवाबगंज जिला फर्रुखाबाद में आने वाले महात्माओं से उस कार्य की बात करने की कई बार इच्छा की। लेकिन मेरी धर्मपत्नी श्रीमती शान्तीदेवी ने मुझे यह कहकर हर बार रोका कि अपनी सभी बहिनें विशेष रूप से श्रीमती जयदेवी तथा श्रीमती राजादेवी के संवाई (एत्मादपुर) में एक महान सिद्ध महात्मा गुरु हैं, उन्हें आप भी अपना गुरु बनाइये और हम सबका जीवन सफल बनायें।

उनकी बात मैंने मानी और शीघ्र ही आने वाली प्रभु नवमी के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए चल दिया। उपरोक्त तिथि को मैंने दीक्षा ली। मैं उसी दिन से अपने को भाग्यशाली और उन्नत पथ पर बढ़ता हुआ समझने लगा। जब मैं इस उत्सव से लौट रहा था तो चपरासी, जीपचालक रेलवे स्टेशन शमसाबाद पर मुझे बहुत ही आश्चर्य की दृष्टि से देख रहे थे। वजह यह थी कि मैं भी अपने को एक सन्यासी जैसा अनुभव कर रहा था। पैर में जूता नहीं था , जो आश्रम में ही कहीं भीड़ में खो गये थे और मैं ट्रेन के छूटने के डर से शीघ्र चला आया था। दूसरे बगल में दीक्षा वाला आसन, हल्का गर्मियों का बिस्तर तथा धोती पहने हुए था। मैं इसी भेष में अपने निवास स्थान पर पहुँच गया और बगैर किसी उलझन के कार्य चलने लगे तथा मैं अपने को बहुत हल्का सा अनुभव करने लगा। प्रमुख जी की उलझनें, स्टाफ की उलझनें सभी आसानी से पार करता हुआ मैंने 3 वर्ष इस ब्लाक में व्यतीत किये। तीन वर्ष की बंदिश के कारण मेरा स्थानान्तरण कानपुर जिले में बिधूना विकास में हो गया। मैंने गुरुदेव का आशीर्वाद समझा, क्योंकि कोई भी पिछला झंझट विकास खण्ड नवाबगंज का लम्बित नहीं छोड़ा और स्टाफ, जनता ने मुझे बड़े स्नेहपूर्ण तथा अश्रुपूर्ण विदाई देकर कार्यभार से मुक्त किया।

बिधूना विकास खण्ड में मैं केवल एक वर्ष रहा, क्योंकि वह खण्ड कमी में समाप्त हो गया था। इस विकास के प्रमुख ने मुझे बहुत आदर एवं स्नेह दिया और अपने निकट के विकास खण्ड पतारा (कानपुर) में ही नियुक्त करा लिया क्योंकि यह प्रमुख श्री वीरेन्द्र बहादुर सिंह चन्देल जिले में बहुत ही इज्जतदार तथा विधानसभा में एम.एल.सी. थे। इस विकास खण्ड में मैं 3 वर्ष रहा और इनके साथ ही मुझे दो विकास खण्ड बिधूना, भीतरगाँव (दोनों समाप्त विकास खण्डों) का चार्ज भी पूरा होने तक का दे दिया। अतः तीन विकास खण्डों का लगभग छः सौ का स्टाफ हो गया और इन सभी का वेतन वितरण, प्रशासनिक कार्य सम्हालते हुए अधिक भार सहन करना पड़ा। इन सभी झंझटों को सम्हालते हुए मैंने अपना स्थानान्तरण इसी विभाग के प्रशिक्षण केन्द्र पर, जहाँ इसी विभाग के कर्मचारियों तथा कृषकों का भी प्रशिक्षण होता है, कराना उचित समझा और मुझे अपने घर के नजदीकी प्रशिक्षण केन्द्र जिला मैनपुरी के प्रशिक्षण केन्द्र पर कर दिया ।

उपरोक्त विकास खण्ड पतारा में मेरे साथ एक घटना घटी। मैं सायंकाल को रोजाना अकेले ही

टहलने जाता था। एक दिन एक शराबी मुझे रास्ते में मिल गया। मैंने प्रभु स्मरण किया और प्रार्थना की कि मुझे इससे छुड़ाइये। क्योंकि वह कुछ गलत बातें कर रहा था। मुझे अभी एक कि.मी. और जाना था। कुछ ही चलने पर मुझे अनुभव हुआ कि प्रभु रामलाल (अपने दादा गुरु) मेरे सिर पर बैठे हैं और मैं अपने को निर्भय समझने लगा तथा वह शराबी भी दस कदम चलकर लौट गया।

इस प्रकार उपरोक्त विकास खण्डों से मुझे मुक्ति, मनचाही जगह नियुक्ति एवं सभी कार्य जो मेरी शक्ति से बाहर थे सम्पन्न हुए वह सब उन्हीं महान गुरुदेव जी तथा प्रभुजी की कृपा से ही सम्पन्न हुए। प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र मैनपुरी की सजावट, शुद्ध वातावरण, वहीं का आवास आदि प्रयोग कर मैं अपने आपको बहुत सौभाग्यशाली समझता रहा और वहाँ 6 वर्ष तक बहुत सम्मान के साथ रहा। इसके बाद मुझे बकेवर (जिला इटावा) जनपद में स्थानान्तरित किया गया और वहाँ भी मैंने उपरोक्त प्रशिक्षण केन्द्र जैसी सुविधायें प्राप्त करते हुए 3 वर्ष व्यतीत किये तथा वहाँ मेरी प्रोन्नति द्वितीय श्रेणी के अधिकारी (राजपत्रित पद) जिला भूमि संरक्षण अधिकारी के पद पर कर दिया। मैं यहाँ मैनपुरी जनपद में पुनः कार्यभार संभालते हुए 3 वर्ष कार्य किया। शुरुआत होने के कारण सभी का सहयोग ठीक ढंग से मुझे मिला। मैनपुरी से मेरा स्थानान्तरणभू.सं.अ. के पद पर जनपद अलीगढ़ में अतरौली खण्ड में हुआ। यह पुरानी यूनिट थी। अतः कार्यकर्ता, आफिस आदि सभी बुरी प्रवृत्तियों से ग्रसित थे और उनको मोड़ देना मेरे लिए बहुत कठिन कार्य था। क्योंकि मैं एक ईमानदार एवं सीधे रास्ते चलने वाला व्यक्ति था। अतः अधिकारी तथा आफिस के कार्यकर्ता और फील्ड के कर्मचारियों में जहाँ 1: 50: 90 का अनुपात हो वहाँ क्या स्थिति होगी? अतः मेरी कनपटी पर एक दिन गोली रखकर कार्य कराने की नौबत आ गयी। लेकिन मैंने मजबूती व साहस से कार्य लिया और बदमाश भाग गया। वह प्रधान लिपिक से उलझ गया और वह छत पर चढ़ बाहर कूद गये और लगभग 20 दिन में ठीक हुए जबकि मेरा कुछ नहीं बिगड़ा। बदमाश इतना जबरदस्त था कि अधिकारी भी मेरा साथ नहीं दे सके। ऐसी परिस्थितियों में मैंने सीधे ही आयुक्त मण्डल को पत्र टाइप कराके भिजवाया और मेरा स्थानान्तरण उन्होंने अपने ही मण्डल की यूनिट फतेहपुर जिला पर एक सप्ताह में ही कर दिया। वही स्थान रिक्त था। लेकिन इस यूनिट के भी बहुत पुरानी होने के कारण गत अतरौली इकाई से भी हाल खराब था। यहाँ आकर भी मुझे दो यूनिट का कार्य मिला और दोनों ही बहुत बिगड़ी हुई युनिटें थीं। क्योंकि इस विभाग में गलत पैसे का बोलबाला था और पैसे के बल पर अधिकारी अच्छी इकाइयों में नियुक्ति करा लेते थे। रद्दी स्थान ईमानदार और वेतन पर जीने वाले अधिकारियों के लिए छोड़ दिये जाते थे। अतः यहाँ भी उच्च अधिकारी अपने निवास स्थान पर ही कार्य करते थे। आफिस में बैठने का साहस कम करते थे। परिणाम हुआ कि मेरे प्रभुजी एवं सद्गुरुदेव भगवान के सामने रुदन करके प्रर्थना करनी पड़ी कि कृपया मुझे इस नारकीय स्थिति से उबारने की कृपा कीजिये और उनके वरदहस्त ने मुझे तुरंत ही मैडीकल अवकाश एवं स्थानांतण कराने का साहस प्रदान किया और अगले दिन मैंने अवकाश तथा स्थानांन्तरण हेतु प्रार्थना–पत्र दे दिया। ट्रांसफर हेतु उस समय क्योंकि मैंने पैसा खर्च नहीं किया अतः 4 वर्ष बाद सफलता मिली जबकि वह भी ऐसी जगह जहाँ केवल ईमानदार अफसर ही जाना पसंद करते थे।

यह कृषि विभाग के लिए एक नई जगह थी, जहाँ जीप लेकर केवल प्रचार ही कृषि विभाग का कार्य था और अन्य साधन कम थे। मेरे यहाँ निवृत होने के लगभग दो वर्ष शेष रह गये थे। अतः अपनी पूर्ण सेवा के कागजात तैयार कराना और शान्ति से विभाग का कार्य करना–कराना ही मुख्य कार्य रहा। उपनिदेशक भी बहुत अच्छे स्वभाव तथा पूर्ण सहयोग देने वाले मिले (श्री एस.के. सिंह) और उन्होंने मेरे सभी कार्य

अंत तक आसानी से करा दिये।

अतः यहाँ अपना लगभग दो वर्ष का समय व्यतीत करता हुआ दिनांक 31 जुलाई 1989 को सेवा निवृत होकर और भावभीनी विदाई लेकर तथा सेवाकाल की सभी वाजिब राशियाँ प्राप्त तथा पैंशन भी 4 अगस्त 1989 को स्वीकृत कराके आगरा में निवास हेतु तैयारी करने लगा। मेरा परिवार नियुक्ति स्थान मोहम्मदी (जिला लखीमपुर खीरी) पर ही जून 1990 तक रहा क्योंकि बच्चे को हाईस्कूल की परीक्षा देनी थी और मुझे उनके निवास हेतु स्थान का निर्माण करना था। आगरा आते समय यहाँ हिन्दू मुस्लिम झगड़े के कारण कर्फ्यू लगा हुआ था, अतः मेरे आने में 3-4 दिन का विलम्ब हुआ। जब मेरा ट्रक चला तो मैनपुरी में मेरे गुरुभाई तथा भानेज दामाद मिले तो उन्होंने बताया कि श्रद्धेय गुरुदेव ने अपना शरीर छोड़ दिया है। मेरी अश्रुधारा बहने लगी और काफी समय के बाद होश आया, क्योंकि मैंने ट्रक वाले को सवाई धाम तक परिवार को ट्रक सहित लाने का विचार बना लिया था, क्योंकि वहीं से दशहरी आम छांट-छांट कर लाया था। इस तरह जो वेदना मुझे हुई उसको व्यक्त करना मेरी लेखनी से बाहर है। इन सभी भीषण परिस्थितियों में मैं अपने नवनिर्मित मकान पर उतर गया।

समय बड़े उत्साह से व्यतीत होता चला गया और अनेकों अरमानों के बीच मेरी श्रीमती जी ने लगभग 10 वर्ष बाद 8 अप्रैल 2000 को अपना शरीर छोड़ मुझे तथा गुरुदेव प्रदत्त बच्चे को जिसकी आयु 25 वर्ष की थी सिर्फ दो प्राणियों को ही अकेला छोड़ दिया। जो शेष बाधायें-समस्यायें शेष रह गयीं उनका भी सामना करने का वक्त आ गया और क्या-क्या कठिनाइयाँ मुझे झेलनी पड़ीं यह लेखनी की शक्ति से बाहर है।

प्रभुजी के मार्गदर्शन अथवा संकेत पर सुपुत्र की शादी भी स्थानीय लड़की के साथ 5 मई 2001 को हो गयी। लेकिन गृहस्थी का कार्य सभी मेरी बड़ी सुपुत्री को ही सम्हालना पड़ा, जिसे अस्थमा का मर्ज रहा (अब ठीक है)। उसने बड़ी कठिनाई एवं हम लोगों के सहयोग से कार्य सम्हाला, अब भी सम्हाल रही है। क्योंकि मेरे पुत्र विजेन्द्र कुमार की पत्नी अपने अस्वस्थ माँ-बाप की देखरेख के लिए अधिकांशतः अपने मायके में ही रहने के लिए विवश है। यही कारण है कि अपनी 3 वर्षीय पौत्री की मधुर मुस्कान और किलकारियों का आनन्द हमें कम नसीब हो पाता है। इस तरह मैंने अपने जीवन का पूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया और अब यह प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि पूरे जीवन को मेरे जीवनाधार, कर्णधार ने मेरी नाव को किन कठिनाइयों में कृपा करते हुए कैसे आसान बनाया, कैसी भयंकर परिस्थितियों को आसान बनाकर निर्वहन करने का अवसर दिया है। मैं विशेष रूप से उन सभी का वर्णन यहाँ कर रहा हूँ जिनमें बगैर गुरु कृपा के उस परीक्षा को पार करना अत्यंत दुर्गम था :-

1. पतारा के शराबी से मुक्ति दिलाना।

2. पतारा, विधूना, धामपुर विकास खण्डों के कार्यों की चरम सीमा से अधिक अधिकता होना और मनचाही जगह पर बगैर रिश्वत के स्थानान्तरण जहाँ यह स्थान, वातावरण परास्नातक ग्रेजुएट को मिलता है, मैं केवल कृषि स्नातक था और मुझे ऐसी शक्ति देना कि कार्यकर्ताओं कृषकों द्वारा मेरी ही मांग करना कि उन्हें प्रशिक्षण हेतु ही बुलाया जाये। मेरे साथी जो पोस्ट ग्रेजुएट थे उन्हें नहीं।

3. मैनपुरी प्रशिक्षण केन्द्र पर ही मेरे निवास पर आगमन। जब पत्नी की सहेलियों ने यह कहा कि इनके तीन सुपुत्री हैं, पुत्र कोई नहीं। तब यह उत्तर देना कि लड़का तो दे दिया है। यह लड़का श्री ब्रजेन्द्र कुमार जो मेरा दत्तक पुत्र है, मेरी बड़ी लड़की का पुत्र है। जिसकी शादी मैंने मैनपुरी प्र.प्र. केन्द्र पर ही

1974 में की थी और उसके अप्रैल 1975 में यह उत्पन्न हुआ और पैदा होने के दिन से कभी भी अपने गाँव बरौठा (अलीगढ़) में लड़के के साथ नहीं गया। वह हम सबने ही पाला-पोसा।

4. बकेवर में मेरी उन्नति भी अनायास ही हुई। हमारे प्रशिक्षण केन्द्र के प्राचार्य ने रिमार्क दिया कि मैंने तो अब तक प्रोन्नति कराने वालों को अधिकारियों के पास दौड़ते देखा, लेकिन आपके पास स्वयं प्रोन्नति करने वाला आया है। क्योंकि लखनऊ निदेशालय कृषि से एक वरिष्ठ लिपिक मेरी फाइल पूरी कराने लाये थे।

5. मेरी सेवा निवृत्ति के बाद पेंशन भी केवल 4 दिन बाद ही स्वीकृत होना एक ऐसी घटना है कि लोगों ने यही रिमार्क दिया कि इतनी जल्दी तो पेंशन आज तक स्वयं निदेशक की भी नहीं हुई।

6. गुरुदेव की व्यापकता की एक घटना भी मैं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। एक बार मैं रामनवमी के उत्सव पर आगरा मीटिंग में जा रहा था। श्रीमतीजी तथा मेरी सुपुत्री मंजू उनके साथ थीं। मैंने अपनी पत्नी से कहा कि तुमको मैं एत्मादपुर जीप से उतारता हुआ आगरा बैठक में चला जाऊँगा और लौटते में शाम को श्रद्धेय गुरुदेव की शरण में आ जाऊँगा। तुम गुरुदेव जी से मिल लेना और रहने की व्यवस्था कर लेना। श्रीमती जी कहने लगी कि वे मुझे जानते तो हैं नहीं। किन्तु जब वे आश्रम पर पहुँची तो गुरुदेव ने स्वतः ही कहा ' शान्ति ! महावीर नहीं आया?' वह दंग रह गयी कि वे तो मेरा नाम भी जानते हैं। यह है उनके ब्रह्माण्ड के कण-कण में व्यापक होने का उदाहरण।

7. आगरे में आने पर निवास हेतु दो दिन के अन्दर ही निवास हेतु प्लाट मिलना और 6 माह के अंदर रहने योग्य आवास बनाकर देना एक अद्वितीय घटना है।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि मेरा पूर्ण जीवन बहुत ही कष्टमय रहा और उन परिस्थितियों में मेरा जब से सद्गुरुब्रह्म ने हाथ पकड़ा मेरी नाव ऐसे चलने लगी जैसे गंगा नदी में एक छोटी सी नाव वर्षात् में ऐसे बह रही हो जैसे उसे उस तिनके का पता भी न हो कि वह कहाँ है? मुझे दीक्षा के बाद किसी बात की ऐसी चिंता नहीं रही कि मैंने कार्य सोचा वह किसी भीषण परेशानी के बाद पूरा हुआ हो। उस दिन से मुझे किसी का अभाव प्रतीत नहीं हुआ और सदैव संतोष रहा। मैं दीक्षा के बाद से लगभग सभी उत्सवों में जाता रहा और अब भी जा रहा हूँ। जब गुरुदेव जी बहिन उमा जी के साथ बैठते थे तो मेरा यही परिचय देते कि 'यह महावीर है।'

अन्त में मेरी उन्हीं कर्णधार से प्रार्थना है कि मेरा अन्तिम दिवस भी विशेष दया के साथ हँसते हुए उनके चरण कमलों में समा जाये। ऐसा ही मुझे पूर्ण विश्वास है। उनके श्रीचरणों में मेरा कोटि-कोटि प्रणाम !

अष्टाङ्ग योग साधना (वहिरंग)

प्रो. ऋषिराम शर्मा, लखनऊ

यद्यपि परमात्मज्ञान वैज्ञानिक अन्वेषणों का विषय नहीं है क्योंकि परमात्मा प्रकृति से परे है और वैज्ञानिक अन्वेषण प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहते हैं। प्रकृति भी परमात्मा की माया का कार्य है अतः कारण होने के नाते माया भी वैज्ञानिक अन्वेषणों का विषय नहीं हो सकती। अतः द्वैतसृष्टि का विज्ञान भी पूर्णरूपेण प्राकृतिक साधनों से नहीं प्राप्त किया जा सकता, तथापि महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग का ऐसा आविष्कार किया जो आंशिक रूप से बुद्धि का भी विषय है तथा मुख्यतः आध्यात्मिक चिन्तन तथा प्रज्ञानुभूतियों का विषय है। प्रथम कल्पित जीवभाव को समझने तथा त्यागने के लिए निश्चयात्मिका तथा विशुद्ध बुद्धि के द्वारा यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार के साधनों के द्वारा गुणविकारों को क्षीण करना तथा आध्यात्मिक चिन्तन के लिए अपनी योग्यता पुष्ट करना आवश्यक है। उसके उपरान्त ध्यान तथा समाधि के द्वारा चित्त की अशुद्धियों को नष्ट कर प्रज्ञानुभूतियों की भूमिकाओं में प्रविष्ट कर परमात्मभाव में प्रवेश करना होगा। ऋतम्भरा प्रज्ञा की प्राप्ति के बाद ही क्लेश तथा कर्मसंस्कारों का क्षय सम्भव है। इसके उपरान्त ही परमात्म–साक्षात्कार की स्थिति आती है जबकि –

अष्टांगयोगानुष्ठानात् अशुद्धिक्षये,
ज्ञानदीप्तिः आविवेकख्यातेः।
पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः
कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तेः इति।।

(योगदर्शन)

अर्थात् महर्षि पतंजलि द्वारा आविष्कृत अष्टांगयोग की साधना करने पर अर्थात् अष्टांगयोग की श्रद्धाविश्वासपूर्वक चिरकाल तक निरन्तर साधना करने से जब चित्त की पंचक्लेश तथा कर्मसंस्कार रूपी अशुद्धि का नाश हो जाय और चित्त का निरोधपरिणाम *(जब चित्त से व्युत्थान की चित्तवृत्तियों का पूर्ण क्षय हो जाय तथा निरोधसंस्कार का प्रादुर्भाव हो जाय तब चित्त निरोधकाल में आत्मतत्व के रूप में दृष्टा से ही प्रकाशित रहता है। इसे चित्त का निरोधपरिणाम कहा जाता है।)* सिद्ध हो जाय तब आत्मज्ञान की ज्ञानज्योति स्वतः प्रकट हो जाती है। जब माया की द्वैतसृष्टि तथा भ्रान्तिज्ञान के मुख्य आदि कारण तीनों गुण पुरुषार्थशून्य होकर अपनी कारणभूता अविद्या माया में लुप्त हो जायें, तब आत्मतत्व अपने सत्यस्वरूप में प्रकट हो जाता है जिसे कैवल्यावस्था कहा जाता है।

इस अध्याय में हमें तीन विषयों पर गहराई से विचार करना है। प्रथम विषय है कि चित्त की अशुद्धि क्या है और इसके नाश के लिए किन–किन साधनाओं की आवश्यकता है। साधनाओं की सिद्धि के बाद कब और कैसे वह ज्ञानदीप्ति प्रकट होकर माया के मलावरण का नाश कर

परमात्मस्वरूप का ज्ञान कराती है जिसके उपरान्त –

आत्मनि विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति।

तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीराः आनन्दरूपं अमृतं यद्विभाति।।

(मुण्डक उप. 2/7)

अर्थात् आत्मज्ञान होने पर स्वतः माया के रहस्यों का ज्ञान हो जाता है तथा उस विज्ञान को पाकर आत्मज्ञ महापुरुषों का चित्त आनन्दस्वरूप तथा अमृतस्वरूप आत्मतत्व से प्रकाशवान हो जाता है। दूसरा विषय है कि अष्टांगयोग क्या है और इसकी साधना कैसे की जाती है? तीसरा विषय है कि सात प्रान्तभूमि वाली प्रज्ञा की प्राप्ति की साधना किस प्रकार पूर्ण होती है और उसकी प्रत्येक प्रान्तभूमि में कैसी अनुभूतियाँ होती हैं। जब योगी चित्त के समाधिपरिणाम तथा निरोधपरिणाम सिद्ध करते हुए प्रज्ञा की उत्तरोत्तर श्रेष्ठ प्रान्तभूमियों से गुजरता है तब उसे परमात्मा की दिव्य तथा व्यापक शक्तियों की अपरोक्ष अनुभूतियाँ होती जाती हैं। इस योगसाधना की विशेषता यह है कि योगी के अन्तःकरण में माया तथा परमेश्वर के ऐश्वर्यों तथा रहस्यों का पर्दाफाश होता जाता है।

सर्वप्रथम हम उस अशुद्धि को जानने का प्रयास करेंगे जिसके क्षय के बिना आध्यात्मिक सिद्धि सम्भव ही नहीं। वह अशुद्धि है गुणविकारों के पंचक्लेश तथा उनसे उत्पन्न कर्माशय। इनसे उत्पन्न वृत्तियों के परिणाम तथा संस्कारों के अतिरिक्त तीनों गुणों का वृत्तिविरोध भी अन्तःकरण में मलावरण बनाता रहता है। यह पंचक्लेश मायाशक्ति के प्रमुख सैनिक हैं– वह हैं अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष तथा अभिनिवेश। अविद्या की परिभाषा है –

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिः अविद्या।।

(योगदर्शन 2/5)

अर्थात् मिथ्या भ्रान्तिज्ञान कराने वाली शक्ति अविद्या है। इसके प्रभाव में अनित्य पदार्थ नित्य भासित होते हैं, जैसे संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील तथा कालान्तर में नाशवान है फिर भी हम उन्हें नित्य मानकर उनके इस स्वभाव से दुःखी होते हैं, अन्यथा सम्पत्ति के नष्ट होने पर या किसी प्रिय की मृत्यु पर हम दुःखी क्यों होते हैं। हम अशुद्धि में शुद्धि देखते हैं, अन्यथा हमारा शरीर अथवा हमारे प्रिय परिवार के सदस्यों का शरीर गुणविकारों से बना है, अशुद्धियों से भरपूर है फिर भी हम शुद्ध मानकर उससे प्यार करते हैं। हम दुःख में सुख तथा अनात्मा में आत्मा का भाव करते हैं, जैसे सभी विषय भोगों में होने वाली सुखानुभूति मिथ्या तथा भ्रान्तिपूर्ण है, क्योंकि जिसका आदि तथा अन्त मिथ्या है उसका मध्य भी भ्रान्तिपूर्ण तथा मिथ्या है, उदाहरण के लिए कुत्ता हड्डी चूसने में सुख का अनुभव करता है, किन्तु वह हड्डी से घायल जबड़े से अपना ही खून चूँसता है अथवा जैसे खुजली खुजाने से सुख का अनुभव होता है किन्तु रोग तथा दर्द दोनों बढ़ जाते हैं। इसीलिए शास्त्र का कथन है कि –

परिणामतापसंस्कारदुःखैः गुणवृत्तिविरोधाच्च सर्वं दुःखं विवेकिनः।।

(योगदर्शन 2/15)

ये हि संस्पर्शजाः भोगाः दुःखयोनयः एव ते।

आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।।

(गीता)

अर्थात् सभी विषयभोगों के सुख वस्तुतः दुःखरूप हैं, क्योंकि उनका परिणाम जन्ममरण का दुःख तथा कर्मबन्धन के कारण शारीरिक तथा मानसिक सभी प्रकार के दुःखों का कारण है। आदि तथा अन्त में अस्तित्वहीन होने से भ्रान्तिमात्र हैं। अतः विद्वान उनमें रमण नहीं करते। इसी तरह सभी योनियों के शरीर पंचभूतात्मक होने से जड़ हैं फिर भी सभी जीवित प्राणी उन्हीं अनात्मा में आत्मा का अनुभव करते हैं। यही विपरीत भ्रान्तियुक्त ज्ञान अविद्या है। दूसरा क्लेश अस्मिता है जिसके द्वारा माया का भ्रान्तिजन्य खेल खेला जाता है। इसकी परिभाषा है –

दृष्ट्दर्शनशक्त्योः एकात्मता अस्मिता।।

अर्थात् आत्मतत्व के रूप में दृष्टा तथा मायारचित इन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि की एकात्मता अस्मिता कहलाती है। इस एकात्मता के कारण माया की जड़शक्तियाँ चैतन्यवान होकर संसार का व्यवहार करती हैं और उनकी असमर्थतायें तथा न्यूनतायें आत्मा पर आरोपित हो गयी हैं। मन की अनुकूलता से पदार्थों में आसक्ति राग क्लेश है तथा प्रतिकूलता से द्वेष क्लेश का जन्म होता है। यही राग तथा द्वेष गुणबन्धन के रूप में जीवात्मा को शरीर में बाँधकर रखता है तथा जन्म–मृत्यु का कारण बनता है। यही जन्म–मृत्यु के दुःख का भय अभिनिवेश क्लेश है। यही पंचक्लेश कर्माशय की रचना करते हैं। इस तरह माया द्वारा संचालित गुणबन्धन तथा कर्मबन्धन जीवात्मा को मायाजाल में बाँधकर कल्पित द्वैतसृष्टि का निर्माण कर संसार का रूप देते हैं। वेदवाणी इसी ओर संकेत करती है कि –

द्वा सुपर्णा सयुजा सखया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वादवत्ति अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।
समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नः अनीशया शोचति मुह्यमानः।
जुष्टं यदा पश्यति अन्यमीशमस्य महिमानमिति बीतशोकः।।

(मुण्डक उप. 3/1/1,2)

स्थूलानि सूक्ष्मानि वहूनि चैव रूपाणि देही स्वगुणैः बृणोति।
क्रियागुणैः आत्मगुणैश्च तेषां संयोगहेतुः अपरोऽपि दृष्टः।।

(श्वेता. उप. 5/12)

अर्थात् संसार के रूप में जितनी भी स्थूल तथा सूक्ष्म योनियाँ हैं वह सभी जीव अपने कर्मसंस्कारों के कारण प्राप्त करते हैं और यही कर्माशय के कर्मसंस्कार तथा चित्त में संचित अनन्त मानसिक वासनाओं के फलस्वरूप मृत्यु के बाद भी देहान्तरप्राप्ति की प्रक्रिया जारी रहती है। परमार्थतः जीव माया द्वारा आत्मा पर विकल्पित भाव है और ईश्वर मायाधीश आत्मा है। दोनों भावों को प्रकृतिरूपी वृक्ष पर आश्रित दो पक्षियों के रूप में दर्शाया गया है। जीवरूपी पक्षी विषयभोगरूपी मायारूपी वृक्ष के विषैले फल खाने में व्यस्त है और ईश्वररूपी पक्षी फल न खाकर केवल साक्षी रूप में अपने सर्वज्ञ स्वरूप में इस मायारूपी वृक्ष का सर्वव्यापी नियन्ता है। जीवरूपी पक्षी फलों के विष से अल्पज्ञ, असमर्थ

तथा भ्रान्तिमोहित होकर दुःखी है। जब कभी गुरुकृपा से अपने साथी पक्षी ईश्वर के महिमामय आनन्दस्वरूप को देख लेता है तब वह भी शोकरहित होकर वैसा ही स्वरूप ग्रहण कर लेता है। ईश्वर का स्वरूप देखते ही माया की भ्रान्ति तथा कल्पित द्वैतसृष्टि स्वतः नष्ट हो जाती है, क्योंकि उपनिषद् इसकी पुष्टि करते हैं।

भिद्यते हृदयग्रन्थिः छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते सर्वकर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।।

(मुण्डक उप. 2/8)

अर्थात् ईश्वरदर्शन के बाद अस्मिता क्लेश नष्ट हो जाता है, अविद्या क्लेश के क्षीण होने से भ्रान्तिज्ञान समाप्त हो जाता है और अज्ञान से संचित कर्माशय भी नष्ट हो जाता है। इसी को अशुद्धि का नाश कहते हैं। इसमें अष्टांगयोग का विशेष योगदान है। महर्षि पतंजलि ने इसे परिभाषित किया है कि –

यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहारधारणाध्यान समाधियः अष्टांगानि।।

(योगदर्शन 2/29)

अर्थात् अष्टांगयोग के आठ अंग हैं। वह हैं (1) यम, (2) नियम, (3) आसन, (4) प्राणायाम, (5) प्रत्याहार, (6) धारणा, (7) ध्यान, (8) समाधि। इनमें प्रथम पांच अंग वहिरंग कहलाते हैं तथा अंतिम तीन अंग अन्तरंग कहलाते हैं। वहिरंग साधन शारीरिक तप हैं तथा इनका उद्देश्य अन्तरंग साधन के लिए योग्यता प्राप्त करना है, जबकि अन्तरंग साधन मानसिक तप है और इनका उद्देश्य चित्त की अशुद्धि का नाश कर ईश्वरदर्शन की योग्यता प्राप्त करना है। अन्तरंग साधन की सिद्धि को ''संयम'' कहा गया है जिस पर विजय प्राप्त कर लेने के बाद –

''तज्जयात् प्रज्ञालोकः'' (योगदर्शन 3/5)

अर्थात् प्रज्ञा की दिव्य भूमिकाओं में प्रवेश हो जाता है। प्रज्ञा की सात भूमिकायें हैं और अन्तिम भूमिका ''ऋतम्भरा प्रज्ञा'' है जोकि परमात्मदर्शन के लिए उत्तरदायी है।

योगसिद्धि में सबसे बड़ा अवरोध है चित्त की अयोग्यता। इसके लिए बहिरंग साधनों की परिपक्वता अत्यावश्यक है। अतः हम इन पर दृष्टि डालेंगे। पहला साधन है यम। यम का अर्थ है उन बाह्य वृत्तियों पर नियन्त्रण करना जो चित्त में मन तथा बुद्धि के माध्यम से प्रवेश करती हैं तथा उस पर अपना अशुद्धि का आवरण डालती हैं। इसकी परिभाषा है कि –

''अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः'' ।।

(योगदर्शन 2/30)

अर्थात् यम के पाँच अंग हैं। (1) अहिंसा, (2) सत्य, (3) अस्तेय, (4) ब्रह्मचर्य तथा (5) अपरिग्रह। अहिंसा का अर्थ है कि अपने व्यवहार से किसी भी प्राणी को शारीरिक अथवा मानसिक वेदना न देना। इस व्यवहार में वही कर्म आते हैं जो अहंबुद्धि से जुड़े हैं क्योंकि अनजाने में अनायास किया गया व्यवहार कर्म ही नहीं है। भगवान श्रीकृष्ण ने इसे स्पष्ट कर दिया है कि –

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।

स हत्वापि इमान् लोकान् न हन्ति न हन्यते।।

अर्थात् जिस कर्म में अहंकारबुद्धि नहीं है और न बुद्धि पर उसका कोई प्रभाव है, वह अकर्म है। सर्वत्र समबुद्धि से लोकहित में निरासक्त भाव से किया गया व्यवहार इस परिभाषा में आता है। दूसरा यम सत्य है। सत्य का अर्थ है किसी भी घटना या विषय का यथार्थ तथा निष्कपट भाव से वर्णन करना। स्वार्थबुद्धि से यथार्थ में परिवर्तन कर बोलना सत्य नहीं है। सत्य के विषय में भगवान श्रीकृष्ण का संदेश है कि –

सत्यं ब्रुयात् प्रियं ब्रुयात् न ब्रुयात् सत्यमप्रियम्।।

अर्थात् सत्य बोलना चाहिए, प्रिय बोलना चाहिए किन्तु जो सत्य सुनने वाले के लिए अप्रिय हो, उसे नहीं बोलना चाहिए। सत्यपालन में भी अहिंसा का पालन होना चाहिए। सत्यवादी व्यक्ति को निःस्वार्थी, निष्कपट तथा अहिंसक होना चाहिए। योग सत्य को जानने की विद्या है अतः जो सत्यवादी नहीं है वह योगी नहीं बन सकता है। आत्मज्ञान के लिए सत्य को धारण करना परमावश्यक है, क्योंकि वेदवाणी का कथन है कि –

सत्येन लभ्यः एषः आत्मा सम्यक्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रः तं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।।

अर्थात् आत्मतत्व का ज्ञान सत्य, विवेकख्याति तथा ब्रह्मचर्य के पालन से ही सम्भव है, क्योंकि शरीर के अन्दर विशुद्ध चित्त में ही सिद्धयोगी महापुरुष अपने शुद्ध ज्योतिस्वरुप आत्मा का साक्षात्कार कर सकते हैं, अन्यथा कोई उपाय नहीं है।

तीसरा यम अस्तेय है। अस्तेय का अर्थ है चोरी न करना, यानि किसी अन्य जीव द्वारा अर्जित धन, सम्पत्ति, विद्या, मान–प्रतिष्ठा का उसकी आज्ञा के बिना अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए लाभ न उठाना। अपने स्वार्थलाभ के लिए किसी भी प्रकार का षड्यन्त्र अथवा कपटव्यवहार न करना अस्तेय है।

चौथा यम ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का अर्थ किसी भी प्रकार की कामवासना की चित्तवृत्ति का उदय न होने देना ब्रह्मचर्य है। कामवासना का तात्पर्य है कि कामसुख की इच्छा से प्रेरित होकर मन से अथवा शरीर से सम्भोग के लिए प्रेरित होना या उसका चिन्तन करना ब्रह्मचर्य का उल्लंघन है। सन्तानोत्पत्ति के उद्देश्य से धर्मानुकूल सम्भोग उल्लंघन नहीं है, क्योंकि भगवान श्रीकृष्ण का कथन है कि –

धर्माविरुद्धो हि भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।।

अर्थात् हे अर्जुन! धर्मानुकूल काम सृष्टिरचना के रूप में परमात्मा की इच्छामात्र है अतः ब्रह्मचर्य का उल्लंघन नहीं है। यदि उसके पीछे शारीरिक तथा मानसिक इन्द्रियसुख की प्राप्ति–भावना है तब वह ब्रह्मचर्यवृत्त का उल्लघन है।

पाँचवाँ यम अपरिग्रह है। जब अपनी अथवा अपनों की सुख सुविधा के लिए सामग्री एकत्र की जाती है और उसमें आसक्ति होने के कारण उसकी रक्षा की चिन्ता बनी रहती है तब उसे परिग्रह कहते हैं। इस परिग्रह की भावना का चित्त में अभाव हो जाना अपरिग्रह है। चित्त की शुद्धि के लिए यम के सभी अंगों का यथावत पालन आवश्यक है, क्योंकि इनका उल्लंघन ही चित्त की अशुद्धि है।

(क्रमशः)

भ्रमर - जप

भ्रमर के गुञ्जारव की तरह गुनगुनाते हुए जो जप होता है वह भ्रमर–जप कहाता है। किसी को यह जप करते देखने–सुनने से इसका अभ्यास जल्दी हो जाता है। इसमें होंठ नहीं हिलते, जीभ हिलाने का भी कोई विशेष कारण नहीं। आँखें झपी रखनी पड़ती हैं। भ्रूमध्य की ओर यह गुञ्जारव होता हुआ अनुभूत होता है। यह जप बड़े ही महत्व का है। इसमें प्राण सूक्ष्म होता है और स्वाभाविक कुम्भक होने लगता है। प्राणगति धीरे–धीमी होती है, पूरक जल्दी होता है और रेचक धीरे–धीरे होने लगता है। पूरक करने पर गुञ्जारव आरम्भ होता है और अभ्यास से एक ही पूरक में अनेक बार मन्त्रावृत्ति हो जाती है। इसमें मन्त्रोच्चार नहीं करना पड़ता। वंशी के बजने के समान प्राणवायु की सहायता से ध्यानपूर्वक मन्त्रावृत्ति करनी होती है इस जप को करते हुए प्राण–वायु से ह्रस्व–दीर्घ कम्पन हुआ करते हैं और आधार–चक्र से लेकर आज्ञाचक्र तक उनका कार्य अल्पाधिक रूप से क्रमशः होने लगता है। ये सब चक्र इससे जाग उठते हैं शरीर पुलकित होता है। नाभि, हृदय, कण्ठ, तालु और भ्रूमध्य में उत्तरोत्तर अधिकाधिक कार्य होने लगता है। सबसे अधिक परिणाम भ्रूमध्य भाग में होता है। वहाँ के चक्र के भेदन में इससे बड़ी सहायता मिलती है। मस्तिष्क में भारीपन नहीं रहता। उसकी सब शक्तियाँ जाग उठती हैं। स्मरणशक्ति बढ़ती है प्राक्तन स्मृति जागती है। मस्तक, भालप्रदेश और ललाट में उष्णता बहुत बढ़ती है। प्राक्तन स्मृति जागती है। मस्तक, भालप्रदेश और ललाट में उष्ण बहुत बढ़ती है। तैजस परमाणु अधिक तेजस्वी होते हैं और साधक को आन्तरिक प्रकाश मिलता है। बुद्धि का बल बढ़ता है। मनोवृत्तियाँ मूर्छित हो जाती हैं। नागस्वर बजाने से साँप की जो हालत होती है वही इस गुञ्जारव से मनोवृत्तियों की होती है। उस नाद में मन स्वभाव से ही लीन हो जाता है और तब नादानुसन्धान का जो बड़ा काम है वह सुलभ हो जाता है। *'योगतारावली'* में भगवान् श्री शंकराचार्य कहते हैं कि भगवान् श्रीशंकर ने मनोलय के सवा लाख उपाय बताये, उनमें नादानुसंधान को सबसे श्रेष्ठ बताया। उस अनाहत संगीत को श्रवण करने का प्रयत्न करने के पूर्व भ्रमर–जप सध जाय तो आगे का मार्ग बहुत ही सुगम हो जाता है। चित्त को तुरन्त एकाग्र करने का इससे श्रेष्ठ उपाय और कोई नहीं है। इस जप से साधक को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है और उसके द्वारा वह स्वपरहित साधन कर सकता है। यह जप प्रपंच और परमार्थ दोनों में काम देता है। शान्त समय में यह जप करना चाहिए। इस जप से यौगिक तन्द्रा बढ़ती जाती है और फिर उससे योगनिद्रा आती है। इस जप के सिद्ध होने से आन्तरिक तेज बहुत बढ़ जाता है और दिव्य–दर्शन होने लगते हैं, दिव्य जगत् प्रत्यक्ष होने लगता है, इष्टदर्शन होते हैं, दृष्टान्त होते हैं और तप का तेज प्राप्त होता है। कविकुलतिलक कालिदास ने जो कहा है–

शमप्रधानेषु तपोधनेषु, गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः।

बहुत ही ठीक है– 'शमप्रदान तपस्वियों में (शत्रुओं को) जलाने वाला तेज छिपा हुआ रहता है।'

SIDDHYOG Postal Regd. No.: Ag. 19/15-17 MAY 2016

प्रेषण कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सैंताई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन बेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्॥
मुण्डकोपनिषद् 2/4

यहाँ औंकार ही धनुष है; आत्मा ही बाण है और परब्रह्म परमेश्वर ही उसका लक्ष्य कहा जाता है। वह प्रमाद रहित मनुष्य द्वारा ही बींधा जाने योग्य है। अतः उसे भेजकर वाण की तरह उस लक्ष्य में तन्मय हो जाना चाहिये।

संस्थापक :- योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज। मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. दासलाल शर्मा के लिए राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा- 3 से मुद्रित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवाई (एत्मादपुर) आगरा से प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/13566 सम्पादक : आचार्य ब्र. (डॉ.) दासलाल शर्मा

PRINTPOINT, AGRA-9897566203